# ❀ भटकती पीढ़ी और दिशा बोध

❀ शांति मुनि

❀ प्रकाशक :
श्री अ. भा. साधुमार्गी जैन संघ,
समता भवन, बीकानेर

❀ सन् : १९८७

❀ तृतीय आवृत्ति

❀ मुद्रक :
जैन आर्ट प्रेस
समता भवन, बीकानेर

उन्हीं प्रेरणा के स्रोत
पूज्य 'नानेश' को
जिनकी
अजस्त्र वाहिनी
प्रेरणा धारा से ही
यह नगण्य सा
प्रयास
कर पाया हूं ।

—"शांति मुनि"

# युवा चेतना

आज प्रत्येक समाज, जाति अथवा वर्ग के समक्ष एक ज्वलन्त प्रश्न खडा है, अपनी युवा--शक्ति के उपयोग की दिशा का । प्रत्येक जाति, समाज अथवा राष्ट्र का भविष्य उसकी युवा पीढी के हाथो मे है । जहां युवा-वर्ग अनुशासन-प्रिय, पुरुषार्थी, कार्य-कुशल एवं दीर्घ-द्रष्टा होगा, वहा निश्चित समाज, जाति तथा देश उन्नति के शिखर पर पहुच सकते हैं । युवक राष्ट्र की रीढ, आधारशिला अथवा नीव हैं, जिसके आधार पर समाज का महल खडा है । युवावस्था वह अवस्था है, जिसमे व्यक्ति सर्वाधिक सशक्त ऊर्जा का सम्राहक एव सवाहक होता है । उसमे आकाशी योजना और तूफानी कर्मजा शक्ति होती है । उसकी शक्ति उस तूफानी सरिता की भाति प्रवाहशील होती है, जो अपना मर्यादित मार्ग छोड देने पर प्रलय ढाह सकती है और इसके विपरीत मर्यादित एव व्यवस्थित रहने पर हजारो मील के रेगिस्तान को भी सस्य-श्यामल बना सकती है तथा कुछ और अधिक व्यव-स्था देने पर हजारो किलोवाट विद्युत ऊर्जा उत्पन्न कर सकती है । भ्रान्त मार्ग-दर्शन युवा-शक्ति को जहां

एक धारणा सी बन गई है कि युवक धर्म के प्रति अनास्थावान बनते जा रहे हैं। मैं इस बात को भी पूर्णत सत्य मानने को तैयार नही हूं, क्योकि मेरा निजी अनुभव है कि युवक धर्म के बहुत करीब है। यदि वे दूर हैं तो तथाकथित धर्म से। कुछ रूढ-मान्यताओ को धर्म का आकार दे दिया जाता है और उन्हे युवको पर थोपने का प्रयास किया जाता है, जिन्हे युवक ढोग के अतिरिक्त कुछ नही मानते। यदि उनकी मौलिकता, व्यवहारिकता एव वैज्ञानिकता उन्हे समझा दी जाए, तो वे उन्हे आत्मसात् करने मे कभी पीछे नही रहेगे। ऐसा मेरा विश्वास है। यद्यपि युवक बाहरी वातावरण के प्रभाव मे आकर उचित मार्गदर्शन के अभाव में विद्रोही अथवा दिशा-हीन होकर भटक जाते हैं, किन्तु उसका भी सम्पूर्ण दायित्व उन्ही पर नही थोपा जा सकता। यह एक वैज्ञानिक तथ्य है, हर आने वाली पीढी पूर्व की अपेक्षा कुछ नूतनता चाहती है। वह परम्परागत चली आ रही रूढमान्यताओ का ही अन्धानुकरण करना नही चाहती है, और पुरानी पीढी उसे अपने अनुरूप साचे मे ही ढालना चाहती है। ऐसी स्थिति मे युवामानस भडक उठता है और सघर्षों का जन्म होता है।

यदि पुरानी पीढी युवामानस एव युवाशक्ति को समझे और युवको को आधुनिक ढग से प्रेम स्नेह एव आत्मीयता के साथ मार्गदर्शन दे, तो कोई कारण

उत्पन्न करने का एक प्रयास किया है। इसी माध्यम से मैं अपने युवा साथियो को भी सकेत करना चाहूंगा कि वे अपनी गरिमा एव क्षमता को समझ-कर शारीरिक एव बौद्धिक शक्ति का सही दिशा मे उपयोग करे। जीवन के "सत्य शिवम् सुन्दरम्" रूप को पाने के लिए अपने सम्पूर्ण जीवन को समाज और धर्म की सेवा मे नियोजित कर दे। समाज धर्म की नीव और उसका गौरव आप ही के कधो पर है।

जैसा कि स्पष्ट है, आज जैन दर्शन वैज्ञानिक दर्शन सिद्ध हो चुका है। ऐसे मौलिक दार्शनिक एव धार्मिक सिद्धान्तो को प्राप्त कर हमे अपने-आपको गौरवान्वित मानना चाहिये और उसकी सेवा मे धन्यता की अनुभूति होनी चाहिये।

यह नगण्य-सा उपहासास्पद प्रयास, प्रेरणा के जिस प्रवाही अजस्त्र स्रोत से हुआ, वह है—महिमा-मडित आचार्यदेव श्री नानालाल जी मा० सा० का व्यक्तित्व। अत: जिस श्रुत-सिन्धु से बिन्दु ग्रहण कर पाया हू, वह बिन्दु उसी सिन्धु को समर्पित है।

—शान्ति मुनि

मर्यादा ही उत्तम आचरण का सुरक्षा-कवच है। प्रभु महावीर का सदेश है कि आचरण की धारा सम्यक् ज्ञान के चट्टानी तटबधो मे ही मर्यादित रहनी चाहिये।

आचार्य गुरुदेव गणेशीलालजी म सा ने श्रमण सस्कृति की सुस्थिति एव उन्नयन के लिये 'शात क्राति' का अभियान चलाया। इस अभियान को ओजस प्रदान करना साधुवर्ग का दायित्व है। इसके लिये साधुवर्ग को जहा साधना के पथ पर अविचल रूप से आरूढ रहना है वहीं अपनी साधनागत अनुभूतियो की अभिव्यक्ति द्वारा सामान्यजन के लिये सुदृढ-साधना-सेतु का निर्माण भी करते चलना है। शात क्राति आत्म-साधना से ही परात्म-साधना के उदय का अभियान है, जो आत्म पक्ष, परात्म पक्ष एव परमात्म पक्ष, तीनो को उजागर करने में समक्ष है। साधु एव साध्वी समाज ने विगत बीस वर्षों मे सम्यक् ज्ञानार्जन की दिशा मे अच्छी दूरी तय की है। रथ बढ रहा है, पथ भी प्रशस्त हो रहा है—

—आचार्य श्री नानेश



## प्रकाशकीय

शान्त क्रान्ति के अग्रदूत स्व आचार्य श्री गणेशलाल जी म सा की स्मृति मे श्री अ भा साधुमार्गी जैन सघ ने श्री गणेश जैन ज्ञान भण्डार को स्थापना की। ज्ञान भण्डार मे अनेकानेक प्रकाशित एव हस्त लिखित ग्र थो का सग्रह हुआ है। हस्तलिखित अप्रकाशित ग्रन्थो का सचयन कर श्री अ० भा० साधुमार्गी जैन साहित्य समिति सर्वजन हितार्थ प्रकाशन करती रही है। इसी शृ खला मे 'भटकती पीढी और दिशाबोध' नाम से प्रकाशित कृति का तृतीय सस्करण पाठको के हाथो मे सौंपते हुए हमे अत्यन्त प्रसन्नता है।

इसका प्रणयन परमश्रद्धेय, समता विभूति धर्मपाल प्रतिबोधक समीक्षण ध्यान योगी परम पूज्य आचार्य प्रवर श्री नानालाल जी म सा के सुशिष्य प० र० श्री शातिमुनि जी ने किया है जिसके लिए सघ मुनि श्री का आभारी।

इस कृति मे मुनि श्री के चार एकाकी 'भटकता युवक', 'युवक और धर्म गुरु' 'दो आयाम तरुणाई के' तथा 'सामायिक साधना और 'शिक्षित युवती' सग्रहीत

हैं। चारो एकाकी दिशाभ्रमित युवा पीढी को धर्म का सही स्वरूप समझाकर सम्यक् दिशाबोध कराने मे भाषा समर्थ हैं। भाषा सरल, सुबोध, और उद्देश्यपूर्ण है

पुस्तक के अन्त मे "युवक धर्म से दूर क्यो" विषय पर मुनिश्री ने अपने सरक्षित विचार प्रस्तुत किये हैं। जो मार्ग दर्शक हैं।

**निवेदक**

| चुन्नीलाल मेहता | धनराज बेताला | गुमानमल चोरडिया |
| --- | --- | --- |
| **अध्यक्ष** | **मंत्री** | **संयोजक साहित्य समिति** |

श्री अ० भा० साधुमार्गी जैन संघ, बीकानेर

कितने हार्ड आ रहे हैं और तुम पिक्चरो की धुन मे हो । बड़े अजीब आदमी हो । दोस्त, जो कही फेल हो गये, तो साल मारा जायेगा ।

प्रदीप—बडी सुन्दर बात कही यार । हम और फ़ेल हो जाये । न भूतो न भविष्यति । तुम्हे मालूम नही प्रिंसिपल साहब तो अपने बाये हाथ के खिलौने है । लास्ट ईयर एक हरा पत्ता पकडा दिया था, और आराम से निकल गये ।

सुनील—भाई, तुम तो सम्पन्न हो और सौ-सौ के नोट लुटाकर भी निकल सकते हो । हमारे पास न तो सौ-सौ के नोट ही हैं और न मैं ऐसा करना उचित मानता हू । आखिर हमारा पढना और परीक्षा देना किसलिए है ?

प्रदीप—परीक्षा और पढाई किसलिए है ! यह भी कोई प्रश्न है ? कोई डिग्री लेकर किसी अच्छी आय वाली पोस्ट पर पहुच जाना यही तो उद्देश्य है हमारे अध्ययन का !

सुनील—(बीच में बात काटकर) मित्र, बड़ी भूल कर रहे हो । हमारी शिक्षा का उद्देश्य केवल उपाधि से अलकृत हो जाना ही नही है । आज राष्ट्र मे इतनी चरित्रहीनता बढ रही है, सच पूछो तो

प्रदीप—सुनील, तुम तो आजकल बडे दार्शनिक बनते जा रहे हो, तुम्हारी बातें तो बडी महत्वपूर्ण है। अच्छा यह तो बताओ यह सब कहा सीखने जाते हो ? कालेज मे यह सब कुछ नही है । और तुम्हारी बातो के रस ने आज मेरे पिक्चर का वक्त भी चुका दिया है।

सुनील—'मानो न मानो हमारा यह जीवन बहुत महत्वपूर्ण है यह केवल आमोद-प्रमोद के लिए नही है। मानव जीवन के साथ बहुत से कर्त्तव्य जुडे हुए है पारिवारिक, सामाजिक, राष्ट्रीय......।

प्रदीप—(बीच मे बात काटकर) तुम्हारा दार्शनिक भाषण फिर सुनेंगे पहले यह तो बताओ यह सब फूक किसकी मारी हुई है।

सुनील—जानना चाहते हो ? चलो आज तुम्हे उसी पिक्चर मे ले चलूगा। अब सिर्फ १५–२० मिनट की देरी है, उस पिक्चर के प्रारम्भ होने मे।

प्रदीप—क्या कह रहे हो ? यह भी कोई पिक्चर से मिलता है ? शहर का एक भी पिक्चर हॉल मुझसे छूटा हुआ नही। सप्ताह मे एक बार ...-कम प्रत्येक पिक्चर का टर्न आ ही जाता है।

एक जादू-सा मनोवैज्ञानिक इफेक्ट मुझ पर पडा और मैं स्वत: ही बिना किसी प्रेरणा के उस महापुरुष के प्रति श्रद्धा से अभिभूत हो अवनत हो गया, मानो मुझे किसी विशेष मन स्थिति में नहला दिया गया हो।

प्रदीप—क्या कहा ? जादू-सा असर और वह भी किसी मानव का ?

सुनील—मित्र, मानोगे नही। उस समय की अपनी मनोदशा का वर्णन मैं शब्दों द्वारा नही कर सकता। एक अलौकिक प्रभाव मेरे मस्तिष्क पर मडरा गया। मुझ मे कुछ अजीब-सा परिवर्तन होने लगा। कुछ समय मूक-सा खडा रहकर वन्दन कर बहनोईजी द्वारा इगित स्थान पर बैठ गया। आश्वस्त हो सरसरी निगाह से वहां की स्थिति का अवलोकन किया। उस समह वहा प्रश्नो का दौर चल रहा था। प्रश्नकर्त्ता थे २०-२५ युवक और २०-२५ बुजुर्ग। उत्तरदाता के सामने पाट पर बैठे हुए समता दर्शन प्रणेता, धर्मपाल प्रतिबोधक, जादू से प्रभावक, जैनाचार्य श्री नानालालजी म. सा और उन्ही के समीप मे एक छोटे पाट पर बैठे हुए सन्त। आचार्य श्री का व्यक्तित्व अतर और बाहर दोनो ओर से आगन्तुक को सहज रूप से अपनी ओर खीच लेता है।

प्रदीप—दोस्त, बुरा मत मानना, तुम्हारी बातो

अहिसा लोगो को कायरता सिखाती है। किन्तु आचार्य श्री ने इसका रहस्य उद्घाटित करते हुए कहा—यह लोगो का निरा भ्रम है। जैन सस्कृति की अहिसा वीरो की ही नही, अपितु महावीरो की अहिसा है। बहुत अधिक आत्मशक्ति सम्पन्न व्यक्ति ही अहिसा के मर्म को समझ सकता है। अहिसा मे विश्व के प्रत्येक प्राणी के प्रति मैत्री भावना का जागरण होता है।

रहा प्रश्न राष्ट्र-रक्षा एव अनीति के प्रतिकार का, सो इसके लिए प्रभु महावीर ने श्रेणी विभाजन करके यह कहा कि श्रावक अपनी देश, सयम की मर्यादा मे रहता हुआ, अनीति के प्रतिकार एव देश रक्षा के लिए युद्ध मे भाग लेता है, किन्तु किसी पर आततताई नही बनता, तो वह अपने व्रतो से च्युत नही होता है। मित्र, सोचो आचार्य श्री ने कितनी सूक्ष्म विवेचना प्रस्तुत की है। मैं तो उसे पूरा रख ही नहीं पा रहा हू।

प्रदीप—क्या यही तुम्हारा आध्यात्मिक पिक्चर है ?

सुनील—सच कह रहा हू प्रदीप, जब से बहनोई जी के साथ इस पिक्चर मे गया था, तब से ऐसा रस आने लगा कि उस विनाशकारी-अश्लीलता

है । दोनो एकाग्रता के साथ श्रवण करते है । प्रश्न चल रहा था जैन धर्म की मौलिक विशेषता का और आचार्य श्री नमस्कार महामन्त्र के माध्यम से उसका विस्तृत विवेचन कर रहे थे । उन्होने कहा कि जैन दर्शन किसी जाति, व्यक्ति या पार्टी का दर्शन नही है और न उससे सम्बन्धित ही है । यह गुणात्मक दर्शन है । किसी भी अन्य दर्शन के वन्दना मन्त्र को ले । उसमे किसी ना किसी व्यक्ति, रूप, महापुरुष को नमस्कार किया गया होगा, किन्तु जैन दर्शन का वन्दना मन्त्र, जो महामन्त्र नमस्कार के नाम से प्रसिद्ध है, इस बात का प्रतीक है कि उसमे व्यक्तिश. किसी को स्थान नही । स्पष्टतया गुणो की ओर ससूचत है । देखिए वह महामन्त्र—

**"णमो अरिहंताणं"**

उन महा चेतनाओ को नमस्कार हो जिन्होने सम्पूर्ण राग द्वेष, कामादि सम्पूर्ण आन्तरिक शत्रुओ पर विजय प्राप्त कर वीतरागता प्राप्त कर ली हो । जो सर्वतो भावेन समद्रष्टा एव सर्वज्ञ बन चुके है । इसमे शातिनाथ, पार्श्वनाथ, या महावीर किसी व्यक्ति विशेष का नामोल्लेख नही है । वह आत्मविजेता महावीर राम या पवन पुत्र कोई भी वीतरागी हो । है ।

दर्शन किसी व्यक्ति, जाति या पार्टी का नहीं, अपितु गुणात्मक एव गुणाधारित दर्शन है। प्रश्नोत्तर समाप्ति पर दोनो बात करके चल पडते हैं।

प्रदीप—मित्र आज मेरे हृदय की खिड़किया खुल गईं। इतने दिन तक मैं सोचता था कि ये साधु लोग निठल्ले और मुफ्त का खानेवाले हैं; किन्तु आज देख रहा हू सन्त समाज का नैतिक चिकित्सक है। सैकडो डॉक्टर मिलकर जिस मानव का इलाज नही कर सकते, उसे ये मानसिक चिकित्सक चन्द मिनटो मे स्वस्थ बना देते हैं।

वास्तव मे हम युवक अनभिज्ञता के कारण ही इन महापुरुषो से दूर रहते हैं। यदि सभी युवक नि.सकोच इन त्यागी महापुसुषो के सम्पर्क मे आना प्रारम्भ कर दें, तो मैं सोचता हू कि राष्ट्रीय चरित्र की यह पतनावस्था देखने को नही मिले। तुम निश्चित मानो, आज से मेरा जीवन आमूल चूल बदल गया है। आज से मेरा नियत क्रम होगा नित्य प्रति आचार्य श्री के प्रश्नोत्तरो का लाभ लेना और अध्ययन के द्वारा पास होना। □

# युवक और धर्म गुरु

स्थान—एक सम्पन्न पारिवारिक सस्थान समय प्रात:काल ।

पिता—सुरेन्द्र, मैं तुझे कितनी बार कह चुका हूं, महाराज साहब शहर मे विराज रहे हैं, दर्शन के लिए जाया करो । महाराज श्री मुझे बार-बार पूछते हैं, बाबू क्यो नही आता ।

सुरेन्द्र—पिताजी, कालेज का टाइम ही ऐसा है कि चाहते हुए भी समय नही निकल पाता है ।

पिता—ये सब बहानेबाजी मैं नही सुनना चाहता हू । दिन भर यार दोस्तो के साथ भटकते फिरते हो । सिनेमा जाने का हमेशा टाइम मिल जाता है और गुरु महाराज के दर्शनो के लिए समय नही मिलता । चलो अभी मेरे साथ दर्शन करके फिर जाना कॉलेज । खाली बहानेबाजी करता है ।

सुरेन्द्र—(गुस्से से) पिताजी, इसमे भी कोई जबरदस्ती होती है । मैं नही चलता अभी, और न मेरी श्रद्धा ही है आपके धर्म गुरुओ मे ।

पिताजी—(तीव्र क्रोध से) सामने बोलता है नालायक कही का। (कहते हुए एक चाटा जड दिया सुरेन्द्र के गाल पर)

सुरेन्द्र—(अत्यन्त आवेश मे) अच्छा पिताजी मैं भी देखता हू कि अब आप कैसे ले जाते हैं। वैसे मैं चला भी जाता, किन्तु अब तो आपके इस चाटे ने मेरी रही-सही श्रद्धा भी उडा दी। आपने रोजाना सामायिक करके और व्याख्यान सुनकर यही तो शिक्षा ली है बात-बात पर तुनक जाना और इस तरह से मारपीट करना।

पिताजी—(थोडा शान्त होकर) बाबू, मैं जबरदस्ती नही करता हूं। तुम्हारी श्रद्धा पैदा करने के लिए ही मैं कह रहा हू कि एक बार चलो, प्रवचन सुनो, कुछ प्रश्न करके महाराज सा० से अपनी शकाओ का समाधान करो"......

सुरेन्द्र—(थोडा शान्त होकर) अच्छा पिताजी, अभी मेरा मूड ठीक नही है। अभी नही जाऊगा। फिर किसी समय जाकर दर्शन कर लूंगा।

पिताजी—अच्छा भाई, जैसी तेरी इच्छा! (कहते हुए अपने काम मे व्यस्त हो जाते हैं। सुरेन्द्र गुमसुम सा बाथरूम मे चला जाता है और स्नान,

ग्रादि से निवृत होकर कॉलेज चला जाता है) ।

दिनेश—(कॉलेज के वाचनालय मे) सुरेन्द्र क्या वात हे ग्राज वडे सुस्त लग रहे हो ? क्या किसी से कुछ झडप हो गई है ?

सुरेन्द्र—नहीं दोस्त, झडप तो मुझसे कौन करेगा । वैसे ही ग्राज सुवह ही सुवह पिताजी ने मूड खराव कर दिया । कहने लगे महाराज के दर्शन करने क्यो नही जाते ।

दिनेश—वडी ग्रच्छी वात हुई यार, ग्राज तो दोनो के साथ यही वीती है । मुझ भी ग्राज पिताजी ने वहुत डाटा । ये लोग न मालूम क्या चाहते हैं ? जवरन धर्म करवाना चाहते है । वहा जाते हैं, कुछ मतलव नही, थोडी इधर-उधर की वात कर लेते हैं महाराज ग्रौर झट से ये सोगन लो, वो सोगन लो, ग्रौर जवरदस्ती करने लगते हैं ।

कमल- (दूर से ग्राते हुए) दोस्तो, ग्राज तो गहरी घुट रही है । क्या मामला है ? किसे फसाने की योजना है ?

दोनो—(हसते हुए) ग्राग्रो कमल, मौके पर ग्रा गये । हम तो तुम्हे ही फसाने का जाल वुन रहे है ।

कमल—मुझे ? दोस्त, मुझे फसाने वाला अभी तक तो कोई पैदा नही हुआ है । (कहते हुए समीप बैठ जाता है) ।

दिनेश—कमल, आज तो हम दोनो पर बडी बुरी बीती । दोनो के पिताजी जिद्द पर चढ़े हुए है कि महाराज के दर्शन करने क्यो नही जाते ।

कमल—वाह-वाह । अच्छा योग मिला । मुझे भी पिताजी तीन-चार दिन से रोजाना कह रहे है । न मालूम कौन से महाराज आए है । चलो आज सैकेन्ड पीरियड मे देख आए ।

[तीनो कॉलेज से निकल कर धर्मस्थान की ओर जाते हैं] ।

स्थान—स्थानक । समय मध्याह्न ।

निकट आकर खड़े हो जाते हैं) ।

मुनिजी :—"दया पालो भाई" । काई नाम है थारा ?

(तीनो अपना-अपना नाम बताते हैं ।)

मुनिजी :—कीरा बेटा हो भाई ?

(तीनो अपने-अपने पिता का नाम बताते हैं ।)

मुनिजी :—अरे ! थु शोभागमलजी रो बेटो है ? कतरी लाग है शोभागमलजी रे । थू तो कदी भाई ने मुण्डोई नी बतावे । दन मे एक दाण तो दर्शन करणा चावे ।

सुरेन्द्र :—(कुछ सकोच करता हुआ) महाराज सा०, कॉलेज का टाइम ही कुछ ऐसा है कि समय नही मिल पाता है । सुबह आठ बजे से शाम को पाच बजे तक कॉलेज मे ही रहना पडता है ।

मुनिजी :—ऐसी काई बात नी है भाई । लगन है, तो समय मिल जावे । अच्छा समाईक, प्रतिक्रमण काई ज्ञान ध्यान आवे ?

सुरेन्द्र :—(शर्माता हुआ) नवकार मन्त्र और

कमल—मुझे ? दोस्त, मुझे फसाने वाला अभी तक तो कोई पैदा नही हुआ है । (कहते हुए समीप बैठ जाता है) ।

दिनेश—कमल, आज तो हम दोनो पर बडी बुरी बीती । दोनो के पिताजी जिद्द पर चढे हुए हैं कि महाराज के दर्शन करने क्यो नही जाते ।

कमल—वाह-वाह । अच्छा योग मिला । मुझे भी पिताजी तीन-चार दिन से रोजाना कह रहे है । न मालूम कौन से महाराज आए है । चलो आज सैकेन्ड पीरियड मे देख आए ।

[तीनो कॉलेज से निकल कर धर्मस्थान की ओर जाते हैं] ।

स्थान—स्थानक । समय मध्याह्न ।

(दो सन्त किसी कार्य मे व्यस्त हैं । एक वृद्ध सन्त छोटे से पाट पर बैठे किसी ग्रन्थ का अवलोकन कर रहे हैं) ।

(तीनो मित्र आपस मे बाते करते हुए स्थानक मे प्रवेश करते हैं और "मत्थएण वन्दामि' (वन्दन सूचक शब्द) का उच्चारण करते हुए मुनिजी के

निकट जाकर खडे हो जाते हैं) ।

मुनिजी —"दया पालो भाई" । काई नाम है थारो ?

(तीनो अपना-अपना नाम बताते हैं ।)

मुनिजी —कीरा वेटा हो भाई ?

(तीनो अपने-अपने पिता का नाम वताते हैं ।)

मुनिजी —अरे ! थु शोभागमलजी रो वेटो है ? कतरी लाग है शोभागमलजी रे । थू तो कदी आई ने मुण्डोई नी वतावे । दन मे एक दाण तो दर्शन करणा चावे ।

सुरेन्द्र —(कुछ सकोच करता हुआ) महाराज सा०, कॉलिज का टाइम ही कुछ ऐसा है कि समय नही मिल पाता है । सुवह आठ वजे से शाम को पाच वजे तक कॉलेज मे ही रहना पडता है ।

मुनिजी —ऐसी काई वात नी है भाई । लगन वे, तो समय मिल जावे । अच्छा समाईक, प्रतिक्रमण कई ज्ञान ध्यान आवे ?

सुरेन्द्र —(शर्माता हुआ) नवकार मन्त्र और

तिक्खुतो के अलावा और कुछ नही आता है, महाराज सा० ।

मुनिजी :—कालेज री पड़ाई रो इतरो टेम मिल जावे और धर्म पडवा रो विल्कुल टेम नी मिले ? अच्छा अबे होगन कर ले दो महीना मे प्रतिक्रमण याद कर लेणो ?

सुरेन्द्र —नही महाराज सा०, सौगन्ध तो मे नही लेता । प्रयत्न जरूर करूगा ।

मुनिजी .—प्रयत्न करता-करता कतरा दिन वेग्या ? बिना पाल बाध्या पाणी नी रुके । अच्छा और कई न कई तो होगन ले ले । शोभागमलजी रो बेटो वेन यू काई करे ? थोडो घणो तो वारो पाट राख ! ले आज लीलोती नी खाणी । राते नी जीमणो, सवारी नी करणी !

सुरेन्द्र —महाराज सा० हरी खाने से क्या पाप है ?

मुनिजी :—हरी सचित वे, उण मे जीव रेवे । हरी खावा से हिसा लागे ।

सुरेन्द्र :—क्या हरी को सुखा कर खाने मे

हिंसा नहीं लगती है ? मैं तो सोचता हू सुखाकर खाने मे अधिक हिंसा लगती है, क्योकि हरी सब्जी तो जितनी चाहिये, उतनी ही लाते हैं, किन्तु सूखी खाने वाले तो दस-बीस किलो एक साथ सुखा देते हैं। उसमे क्या अधिक पाप नही लगता ? मेरी माताजी को मैं देखता हू, न मालूम कितनी सब्जी सुखा लेती हैं, जो साल भर तक भी समाप्त नही होती।

मुनिजी '—ई तो थारी कुतर्का है। हरी मे हिंसा लागे सूखी मे नी लागे। थारो दोष कोनी भाई, आज काल री पढाई ज असी है के थोडा पढ्या के कुतर्का करवा लागे। थारी मरजी वे तो कई होगन ले लो नी तो दया पालो।

सुरेन्द्र —क्षमा करना महाराज सा०। वैसे ही प्रश्न चल गया इसलिये पूछ लिया ' '' 'अच्छा 'मत्थएण वन्दामि'।

(तीनो वन्दन करके बाहर चले आते हैं)।

कमल —(रास्ते चलते हुए) सुरेन्द्र, तू भी बेकार उलझ गया यार महाराज से। कितना टाइम लगा दिया, हमारा तो वहा खडे रहने का भी मन नही हो रहा था। कितने गन्दे कपड़े थे महाराज

के ! मुझे तो उनके कपडो मे गन्ध आ रही थी ।

सुरेन्द्र :—यार, महाराज ने जाते ही सौगन्ध की बात छेड दी । तब पिण्ड छुडाने के लिए कुछ तो बात चलानी ही थी ।

दिनेश :—यह चर्चा महाराज निश्चित तुम्हारे पिताजी-माताजी के सामने करेंगे ।

सुरेन्द्र :—करने दे ना यार, फिर हमेशा की झञ्झट मिटी । फिर पिताजी कभी नही कहेगे कि महाराज के यहा जाया करो ।

कमल —वाह दोस्त, ! पिण्ड छुडाने का यह अच्छा तरीका ढूंढा । महाराज भी बड़े अजीब हैं । कितने गन्दे रहते है ? जरा-सा प्रश्न करने पर कहने लगे कुतर्क करता है ।

सुरेन्द्र ·—इसीलिये तो यार कभी जाने की इच्छा नही होती है साधुओ के यहा ।

(तीनो बाते करते हुए पुन कॉलेज चले जाते हैं ? एक पीरियड अटेण्ड करके पुन वाचनालय मे जाकर बैठ जाते हैं । रमेश प्रवेश करता है ।)

सुरेन्द्र :—आइये दोस्त, आइये, तुम्हारा ही

इन्तजार था ।

रमेश - (समीप की एक कुर्सी पर बैठते हुए) क्यो भाई, तुम और मेरा इन्तजार करोगे ?

कमल .—सच में आज तुम्हें ही आडे हाथों लेना है । रोजाना कहा करते हैं अच्छे विद्वान महाराज श्री आए हैं, चलना चाहिये । आज हो आए तेरे गुरुजी के पास । कौन से अच्छे विद्वान हैं ? जरा-सा प्रश्न किया कि तुनक गए ।

रमेश —बिल्कुल झूठ । मैं नही मानता इस बात को । मेरे महाराज श्री गुस्सा नही कर सकते, चाहे तुम कैसा ही प्रश्न करो ।

दिनेश —अरे, रहने दे यार, हम क्या झूठ बोल रहे हैं ? अभी-अभी हम तीनो जाकर आ रहे हैं । सुरेन्द्र की महाराज से थोडी झडप हो गई । इसने हरी सब्जी का प्रश्न किया और महाराज गुस्से में होकर कहने लगे—तुम तो कुतर्क करते हो ।

रमेश —हो सकता है आपकी बात सही हो, किन्तु मुझे विश्वास नही हो रहा । मैं प्रतिदिन महाराज श्री के यहा सन्ध्या ८ से ९ वजे तक प्रश्नोत्तरो में जाता हू । सभी तरह के प्रश्न होते हैं, किन्तु मैंने

कभी महाराज श्री तो क्या उनके छोटे सन्तों को भी प्रश्नोत्तरो मे उत्तेजित होते हुए नही देखा है। अच्छा, आज सन्ध्या मेरे साथ चलना और बताना कौन से महाराज उत्तेजित हुए।

कमल '—जाना क्या है, यही बताए देते हैं। वे वृद्ध दुबले से एव एकदम गन्दे कपडे पहने हुए थे।

रमेश '—ओह! मैं समझ गया। कितनी भ्रान्ति हो जाती है सुनने और समझने मे? पर मैं एक बात तुम्हे कहूगा-किन्ही एकाध सन्तो को ऐसा देखकर सभी के विषय मे गलत धारणा बना लेना कहा तक ठीक है? जिन सन्तो के विषय मे तुम चर्चा कर रहे हो, मैं समझ गया हू। उनको थोडी उत्तेजना आ जाती है। किन्तु आज सन्ध्या को जरूर आप मेरे साथ चलेगे और मैं दावे के साथ कहता हू। आज चाहे जैसा प्रश्न करे, वहा उत्तेजना नही आएगी।

दिनेश —तो क्या वे तुम्हारे गुरुजी नही हैं?

रमेश —नही, ऐसी बात नही है। वे भी सन्त हैं,। किन्तु सभी का नेचर समान नही होता है और न सभी मे समान कला ही होती है।

सुरेन्द्र –(हंसता हुआ) अच्छा, देख लेंगे

आज तुम्हारे गुरुजी को भी कैसे हैं ?

रमेश :—रात्रि को ठीक आठ बजे आप मेरे यहा पहुच जाएगे या मैं आपके यहा आऊ ?

सुरेन्द्र —नही दोस्त, तुम्हे कष्ट करने की आवश्यकता नही हैं, हम स्वय आ जाएगे तुम्हारे घर ।

(सभी अपनी-अपनी क्लास मे चले जाते हैं) ।

स्थान – एक अन्य स्थानक—समय रात्रि आठ बजे ।

(रमेश, सुरेन्द्र, कमल और दिनेश कुछ बातें करते हुए धर्म-स्थान मे प्रवेश करते हैं । वहा पहले से ही कुछ युवक एव कुछ बुजुर्ग बैठे हैं । सामने पाट पर दो मुनि बैठे हुए हैं । कुछ प्रश्न-चर्चा चल रही है । रमेश के साथ तीनो मित्र कुछ उच्च स्वर से 'मत्थएण वन्दामि' का उच्चारण करते हुए मुनिजी के निकट चले जाते हैं ।)

मुनिजी —'दया पालो' (कहते हुए) कौन, रमेश ?

रमेश —जी गुरुदेव ।

मुनिजी —और किन साथियो को ले आया, आज ?

रमेश –(तीनो का परिचय देते हुए) गुरुदेव, ये तीनो मेरे मित्र है । कमल गेन्दालालजी का, दिनेश जीवनसिहजी का, और सुरेन्द्र शोभागमलजी का लडका है ।

मुनिजी —अच्छा-अच्छा इन तीनो के पिताजी तो धर्म मे बड़ी रुचि रखते हैं, ये आज ही आए हैं क्या ?

रमेश –हा गुरुदेव, इनकी कुछ जिज्ञासाएं हैं । समाधान चाहते है ।

मुनिजी —जरूर पूछो भाई । प्रश्न करने से तो हमारे मन की गुत्थिया सुलझती हैं, ज्ञान की वृद्धि होती है और विचार परिपक्व होते हैं । नि सकोच जो भी आपको पूछना हो, पूछे मैं जरा उस युवक के प्रश्न का उत्तर पूरा कर देता हू ।

मुनिजी —क्यो सुधीर, तुम्हारे समझ मे आया कि नही कि हम पाचो तिथियो को ही क्यो त्याग करते है ।

सुधीर .—हा गुरूदेव, कुछ तो समझ मे आ

गया है । आपने फरमाया कि वैसे त्याग तो जब भी करें, अच्छा ही है, किन्तु गृहस्थ की झझटो मे उलझा व्यक्ति प्रतिदिन त्याग नही कर सकता है । अत आचार्यों ने यह व्यवस्था कर दी कि कम से कम दो दिन छोडकर एक दिन तो त्याग कर लिया करो ताकि कुछ पापो से बचा जा सके । किन्तु महाराज श्री, मेरा प्रश्न तो ज्यो का त्यो ही है कि इन दिनो मे द्वितीया, पचमी, अष्टमी, एकादशी एव चतुर्दशी ही क्यो चुनी गई । एकम, तीज आदि तिथिया भी तो ली जा सकती थी ?

मुनिजी —सुधीर, प्रश्न तो तुम्हारा बहुत सुन्दर है, किन्तु मैं एक बात पूछू ? यदि एकम, तृतीया, सप्तमी आदि रख देते तो क्या तुम्हारा यह प्रश्न नही होता कि एकम आदि ही क्यो रखी गई है ? (जिज्ञासुओ मे हसी की सरसराहट) फिर भी इन तिथियो का निर्धारण सोद्देश्य है । प्रत्येक तिथि के पीछे आत्म—कल्याण की भावना छिपी हुई है । द्वितीया को हम इसलिए त्याग करते हैं कि हमारी आत्मा के साथ राग और द्वेष दो शत्रु लगे हुए हैं । अत उस रोज हम भावना बनाते हैं कि हमारे त्याग का उद्देश्य राग—द्वेष को नष्ट करना है । इसी प्रकार पचमी को हमारा चिन्तन पचम (केवल) ज्ञान की उपलब्धि का होता है अष्टम को आत्मा पर लगे आठ

कर्मों के क्षय करने का, एकादशी का एकादश अग—शास्त्रो के अध्ययन की स्मृति और चतुर्दशी को चौदहवे गुण स्थान तक पहुचने की धारणा वनती है। इस प्रकार पाचो तिथिया एक विशेप उद्देश्य-पूर्वक निश्चित की गई हैं। क्यो सुधीर, कुछ समझ मे आया ? इसमे तर्क हो, तो और कर सकते हो।

सुधीर —गुरूदेव, मैं अच्छी तरह समझ गया हू। अब मेरा कोई तर्क नही है।

मुनिजी :—अच्छा विद्यार्थियो, अब आप अपनी जिज्ञासा रखिए।

सुरेन्द्र .—गुरुदेव, इसी सन्दर्भ मे मेरा एक छोटा-सा प्रश्न है—तिथियो को जो आप त्याग करवाया करते हैं, उसमे अधिकाश हरी सब्जी का त्याग करवाया करते है। मेरा प्रश्न है कि हरी सब्जी मे और उसको सुखाकर खाने मे क्या अन्तर पड़ता है ? मैं जहा तक सोचता हू कई बार सुखाकर खाने मे अधिक हिंसा हो जाती है, क्योकि सुखाने वाला बहुत बार बहुत सारी एक साथ सुखा देता है। जितनी कि वर्ष भर तक काम मे नही आती है।

मुनिजी —कौन, शोभागमलजी का लड़का है ? क्या नाम बताया तुमने ? सुरेन्द्र ?

सुरेन्द्र '—हां गुरूदेव मेरा नाम सुरेन्द्र है।

मुनिजी —बहुत सुन्दर प्रश्न किया है, तुमने, यह प्रश्न अनेको के दिमाग मे उठता है और सभी के समझने लायक है।

ऐसा है कि हम जो कुछ भी त्याग करते हैं, उसका उद्देश्य केवल हिंसा-अहिंसा ही नही है। अन्य अनेक दृष्टिकोण उसके साथ रहते हैं। जहा तक हिंसा का सवाल है हरी खाने मे और सुखाकर खाने मे, जैसा कि तुम्हारा कहना है, लगभग ही होती है। किन्तु त्याग केवल अहिंसा पर ही आधारित नही होते। हा, जो व्यक्ति हरी का त्याग लेता है उसे महज इस उद्देश्य से नही सुखाना चाहिए कि मेरा हरी खाने का त्याग है इसलिए मैं सुखा दू। ऐसा करने वाले को त्याग का प्रतिफल जो ममत्व विजय है, पूरा नही मिल सकता, क्योकि उसकी आसक्ति उस पर बनी रहती है। हा कुछ सब्जिया ऐसी हैं जो मौसम मे ही आती हैं, जैसे - सागरी, पत्ती की सब्जिया, आदि। उन्हे गृहस्थ अपनी पारिवारिक सुविधा के लिए सहज सुखाता है। उसका उपभोग यदि त्याग वाला करता है, तो उसे हिंसा वाला दोष भी नही लगता है। दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि हरी के त्याग मे अहिंसक दृष्टि के साथ रसना—

विजय का उद्देश्य रहता है। जैसा स्वाद हरी सब्जी के खाने मे आता है, वैसा सूखी मे नही आता। अत आसक्ति भाव हरी पर अधिक होता है। इस प्रकार हिंसा की दृष्टि से लगभग समान होते हुए भी कम से कम रसना—विजय का लाभ तो हरी का त्याग करने वाले को मिलता ही है।

मेरे ख्याल से हरी के त्याग का महत्व कुछ आपकी समझ मे आया होगा। और कोई तर्क हो, तो कर सकते हो।

सुरेन्द्र —महाराज श्री, आपने तो इतना स्पष्ट कर दिया कि अब प्रतितर्क को तो अवकाश ही कहा है ? मैं बडा कृतज्ञ हू आपका ! और भी कुछ जिज्ञासाए है, किन्तु आज तो हमने आपका काफी समय ले लिया है। कल अवश्य समय निकालकर आऊगा।

मुनिजी नही, अभी तो कुछ समय और शेष है, आजकल सूर्यास्त काफी विलम्ब से होता है, अत ६-३० तक ज्ञान-चर्चा चलती है। आप एक-दो प्रश्न और कर सकते है। शायद अभी तो ६ ही बजा होगा।

सुरेन्द्र :—जी गुरुदेव, टाइम तो अभी ६ का

ही हुआ है। आपकी अनुमति हो तो एक दो प्रश्न और पूछ लू ।

मुनिजी —अवश्य पूछिये, यह समय इसी के लिये है।

सुरेन्द्र —महाराज श्री, धृष्ठता के लिए क्षमा करें। मेरा प्रश्न कुछ अटपटा है। आप स्पष्ट करने की कृपा करें। समाज एव राष्ट्र के लिये साधुसघ की क्या उपयोगिता है ? क्या मुनि-जीवन समाज के लिये भार रूप नही है ? विना परिश्रम के भिक्षावृत्ति करके खाना क्या आज की परिस्थितियो एव सामाजिक व्यवस्था के लिये प्रतिकूल नही है ?

मुनिजी —बहुत सुन्दर एव मौलिक प्रश्न किया है तुमने। इस विषय को समझने के लिये हमे थोडी गहराई मे प्रवेश करना होगा। पहले तो तुम जरा यह स्पष्ट करो कि परिश्रम से क्या अर्थ है तुम्हारा ?

सुरेन्द्र -परिश्रम से मेरा अर्थ है हमे, शारीरिक या मानसिक किसी प्रकार का श्रम किये विना किसी से कोई पदार्थ नही लेना चाहिये ।

मुनिजी :—बहुत सुन्दर। अब जरा

करो । एक लेक्चरार कॉलेज में क्या श्रम करता है ? यही ना कि दो या तीन घण्टे लेक्चर देता है । इसके अतिरिक्त उसका और कोई कार्य नही है, और यही उसका श्रम है, जिसके प्रतिफल मे वह पाच सौ-सात सौ रुपये मासिक प्राप्त करता है । तात्पर्य यह है कि आपकी अपनी दृष्टि मे भी यह तो स्पष्ट है कि श्रम का अर्थ केवल खेत खोदना, मजदूरी करना अथवा सैनिक बन जाना ही नही है । अब रहा सवाल साधु सघ के श्रम का, सो वह अपने ढग का श्रमजीवी है । हा, हिन्दुस्तान मे कुछ साधु सस्थाए ऐसी हैं, जिनमे हजारो लाखो साधु बिना किसी श्रम के जीते हैं । वे अवश्य समाज पर भार रूप होते हैं, क्योकि भिक्षावृत्ति के अतिरिक्त उनकी कुछ ऐसी प्रवृत्तिया भी होती है, जो समाज मे दुर्व्यसनो का प्रसार करती है । जैसे—चरस, भाग, गांजा आदि नशीले पदार्थों का सेवन । किन्तु सम्पूर्ण साधु सस्थाए ऐसी ही हैं, ऐसा नही कहा जा सकता । कम से कम जैन श्रमण तो इसके अपवाद ही हैं । "श्रमण" शब्द से ही स्पष्ट अभिव्यजित होता है, कि जैन श्रमण की साधना श्रमजीवी साधना है । श्रमण शब्द की नियुंक्ति करते हुए जैनाचार्यो ने कहा है "श्राम्यन्ति, तपस्यन्ति इति श्रमणा" अर्थात् जो निरन्तर श्रमशील हो, वह श्रमण लाता है । जैन श्रमण का साधक जीवन कठोर का साधक जीवन है ।

सुरेन्द्र :—गुरुदेव, यह तो मुझे विदित है कि जैन श्रमण की तपस्या कठोर ही नही, बेजोड, अद्वितीय है, किन्तु मेरी विनम्र जिज्ञासा तो यह है कि उसकी उस साधना की समाज के लिये क्या उपयोगिता है ?

मुनिजी — · मैं उसे ही स्पष्ट कर रहा हू। · ··· मैं कह रहा था, जैन श्रमण की साधना 'श्रम' की साधना है, और उसका वह श्रम केवल अपने लिए ही नही है। उदाहरण के लिए एक प्रोफेसर को ही लें, उसका तीन घण्टे का पारिश्रमिक प्रति माह करीब ५००-७०० रुपये होता है, और वह श्रम कितना करता है। केवल यही कि छात्रो मे कुछ व्यावहारिक नालेज जागृत कर देना। इसी परिप्रेक्ष्य मे तुम एक जैन मुनि के श्रम को देखो। वह प्रति दिन प्रवचन के माध्यम से हजारो व्यक्तियो को लाभान्वित करता हुआ उनके दुर्व्यसनो को छुडाकर उन्हे मानसिक शाति देता है। और बदले मे केवल सादे सीधे वस्त्र और भोजन के अतिरिक्त कुछ नही लेता। साथ ही विशेषता यह है कि वह निर्भीकतापूर्वक सचोट बात कह सकता है, जो कि प्रोफेसर नही कह सकता। प्रोफेसर का श्रम केवल अर्थ पर टिका हुआ है, अत उसमे नैतिकता के प्रति भी सचोटता नही आ सकती। दूसरे, जो स्वय धूम्रपान,

नशीले पदार्थों का सेवन, आदि दुर्व्यसनो का शिकार होता है, वह दूसरो को उनसे कैसे मुक्त कर सकता है? आज आप देखते है शिक्षक वर्ग की कैसी स्थिति है! जब स्वय शिक्षक वर्ग मे नैतिकता नाम शेप रह गई है, तो वे क्या छात्रो को नैतिक बना सकेंगे? केवल सामान्य आजीविकोपार्जन का परिज्ञान कर लेना ही हमारे जीवन का उद्देश्य नही है। आजीविकोपार्जन के साथ-साथ मानसिक एव आत्मिक शाति प्राप्त करना भी हमारे जीवन का प्रमुख उद्देश्य है।

आप जरा गहराई से चिन्तन करेंगे और वैज्ञानिक सर्वेक्षणो का अध्ययन करेंगे तो आपको ज्ञात होगा कि ९० प्रतिशत व्यक्ति मानसिक रोगो के शिकार होते है। शारीरिक रोग से मुक्ति के लिये लाखो डॉक्टर तैयार हो रहे है। उन रोगो की जड मानसिक धरातल पर उद्भूत होती है। उसका उपचार शरीर चिकित्सको से नही, आध्यात्मिक नैतिक चिकित्सको से ही हो सकता है। वे आध्यात्मिक चिकित्सक सन्त है। दार्शनिको की भाषा मे सन्त समाज के नैतिक चिकित्सक है। हजारो डॉक्टर मिलकर जिस मानसिक बीमारी का इलाम नही कर सकते, उसका एक चरित्रनिष्ठ सन्त इलाज कर सकता है।

अब जरा आप स्वय की बुद्धि से निर्णय दे कि

कोई तर्क है ?

सुरेन्द्र —मुनिश्री, मै किन शब्दो मे आभार व्यक्त करूं। आज मुझे वस्तुनिष्ठ एव तर्कनिष्ठ समाधान मिले है। अब तो समय हो चुका है। अन्य जिज्ञासाओ को फिर कभी श्री चरणो मे प्रस्तुत करूगा। और कुछ जिज्ञासाए है। आज तो हमने आपका बहुत समय ले लिया है कल अवश्य समय निकाल कर आऊगा।

मुनिजी :—बहुत अच्छा। आप नि सकोच जैसा भी प्रश्न हो अवश्य पूछे। यह समय इसी दृष्टि से रखा गया है। हम चाहते है कि आप जैसे युवक धर्म को समझे। जहा तक मैं सोचता हू आप लोगो मे तत्व को समझने की क्षमता है और आप युवक एक बार उसे समझ भर ले फिर अपने आप आपकी श्रद्धा जम जाती है। कमी है तो हमारी कि हम साधु लोग कई बार आपको समझा नही पाते है और कई बार माता-पिता भी समझ से काम नही लेकर बच्चो से धर्म के विषय मे झगडा करते है। इससे युवको पर विपरीत असर पड़ता है। अगर अभिभावक प्रेमपूर्वक उन्हे धर्म के मर्म को समझाने का प्रयास करे, तो निश्चित, जो क्रान्ति युवक कर सकते है वह बुजुर्ग नही। आप अवश्य प्रश्नोत्तरो का लाभ लें।

सुरेन्द्र :—महाराज श्री, आपके विचारो एव

प्रेमपूर्ण वाक्यावली से मेरा हृदय गद्-गद् हो रहा है। आप निश्चित समझिये मेरा ही नही मेरे सारे साथियों का जीवन क्रम आज से ही बदल गया। मेरे अपने विचारो को मैं फिर कभी आपके चरणो में निवेदन करूंगा। अभी आपका बहुत अधिक समय ले लिया है, क्षमा करें।

(सभी जिज्ञासु विधिपूर्वक वन्दन कर, मंगल पाठ श्रवण कर विदा हो जाते हैं चारो साथी आपस मे बाते करते हुए धर्म स्थान से बाहर निकलने हैं।)

रमेश —(हसता हुआ) देख लिया न मेरे गुरुजी को। रोजाना मजाक उडाया करते थे मेरी। मित्रो, ये तो छोटे मुनि हैं। आप इनके गुरू को देखेंगे तब आपको ज्ञात होगा कि वास्तव मे जैन मुनि कितने क्षमावान होते हैं।

सुरेन्द्र —रमेश, बुरा मत मानना। तुम्हारे ये ऐसे वैसे गुरु बन बैठते हैं वे ही हम युवको की धर्म से श्रद्धा उतारने वाले होते हैं। किन्तु ये मुनि जिनसे अभी हम चर्चा करके आ रहे हैं ये तो स्वयं युवक ही लगते हैं और युवको के विचारो को भी समझते हैं। ऐसे अगर १०-२० जैन मुनि हो तो मैं सोचता हू, युवक तो इनके पास दौडे आएगे क्यो कमल ठीक है न मेरे विचार ?

कमल—बिल्कुल ठीक है यार। दोपहर वाले मुनिजी तो बडे अजीब ही थे ? इन मुनिजी के तो कपडे भी न अधिक साफ लग रहे थे और न अधिक गन्दे। बडे सादगी-पूर्ण लग रहे थे।

दिनेश :—रमेश, अब तो हम भी तुम्हारी मण्डली मे आ गये हैं और अब निश्चित रूप से प्रतिदिन प्रश्नोत्तरो मे पहुचेंगे। अब पिताजी को कहने की आवश्यकता नही पडेगी।

रमेश :—सुरेन्द्र, मेरी हार्दिक भावना थी कि अगर तुम सत्य तथ्य को समझ लो, तो सभी मित्र सही रास्ते पर आ जायेंगे और आज मेरा वह स्वप्न साकार हो गया। (चारो अपने-अपने घर चले जाते हैं)। □

एकांकी

# दो आयाम-तरुणाई के

(जैनेन्द्र एक जैन कुलोत्पन्न मेघावी युवक, सायकाल भ्रमण के लिए किसी पार्क की ओर जा रहा है। उसका सहपाठी महेश पीछे से आता हुआ)

महेश —(दूर से) अरे ओ जैनेन्द्र, कहा जा रहे हो यार, अकेले-अकेले ? हम भी तो आ रहे हैं।

(जैनेन्द्र कुछ क्षण रुक जाता है। तब तक महेश नजदीक आ जाता है, दोनो हाथ मिलाते हैं)।

जैनेन्द्र .—आइये मित्र, बहुत दिनो मे मिले यार। (दोनो साथ चल पडते हैं)।

महेश —तुम किधर रहते हो यार, कुछ पता ही नही लगता है। न मालूम अकेले कहा छिपे रहते हो।

जैनेन्द्र :—नही, ऐसी कोई बात नही है, किन्तु मुझे अकेले ही रहना अच्छा लगता है। वैसे प्रतिदिन

घूमने जाया करता हूं, अकेले ही ।

महेश :—कैसे मन लगता है यार अकेले मे तुम्हारा ? अकेले बैठे-बैठे बोर नही होते हो ? मैं तो दो तीन दिन मे ही अकेले मे बोर हो रहा था कि सयोग से आज तुम मिल गये ।

जैनेन्द्र :—क्यो, आज अकेले कैसे ?

महेश :—अरे, तीन दिन से प्रसन्न ससुराल गया हुआ है । अभी शादी हुए तो तीन महीने हुए हैं और न मालूम कितने चक्कर काट लिये हैं ससुराल के । पढाई-वढाई तो सब चौपट हो गई है ।

जैनेन्द्र :—क्या कहा, प्रसन्न की शादी हो गई है ?

महेश :—वाह दोस्त, तुम भी किस दुनिया मे खोये रहते हो । यह भी पता नही ?

जैनेन्द्र :—महेश, सच मे बात यह है कि मैं अपने हाल में मस्त रहता हू । मुझे अधिक परिचय वढाना अच्छा नही लगता ।

महेश :—हा दोस्त, यह तो हम भी जानते हैं । लगेगा भी कैसे, साथियो मे तो पैसे खर्च करने

पढते हैं और तुम ठहरे पूरे कजूस । इसलिये कॉलेज में भी कैसे अकेले से रहते हो, खैर होगा । (बात बदलते हुए) अरे बात ही बात मे आगे निकल गये यार, अशोका तो पीछे रह गई । चलो जरा कुछ समय अशोका (होटल) मे ही वैठेंगे ।

जैनेन्द्र —नही दोस्त, होटल की गन्दी हवा हमे पसन्द नही । हम तो गुलाव वाग मे जायेंगे ।

महेश —अच्छा तो एक मिनिट ठहरना, जरा एक कैपस्टन पैकेट ले आता हू । (कहता हुआ पीछे दौड जाता है और अशोका होटल से एक पाकिट सिगरेट एव दो वाईन (शराव) की वाटल लेकर लौट आता है । दोनो वातें करते हुए आगे चल पडते हैं) ।

जैनेन्द्र —महेश, यह सिगरेट पीना कब से शुरू कर दिया तुमने ?

महेश —इसमे क्या बात है, यह तो आजकल की फैशन है । वैसे दो एक वर्ष से प्रसन्न और दिलीप के सम्पर्क से कुछ सिगरेट और वीयर का नशा पाल लिया है यार ।

जैनेन्द्र .—क्या कहा, प्रसन्न सिगरेट और शराव पीता है ? जैन होकर ?

महेश :—हमको भी तो यह रग उसी ने चढाया है। वैसे इसमे बुरा भी क्या है? थोडा मन बहला लेते हैं, थकान उतर जाती है। जैन-वैन का इसमे क्या सवाल है, आजकल तो सभी पीते हैं।

जैनेन्द्र —बडे अजीब आदमी हो यार। इतनी बुरी आदतो मे उलझ रहे हो और ऊपर से तर्क लगा रहे हो कि इसमे बुरा क्या है। इसका मतलब तुम्हारी दृष्टि मे दुनिया मे कोई बुरा काम है ही नही। चाहे शराब पीओ, मास खाओ, वेश्यागमन करो………………।

महेश :—(बीच मे बात काटकर) दोस्त, अच्छी और बुरी की व्याख्यात्मक दार्शनिक बाते तो मुझे नही आती, किन्तु भगवान ने आखिर यह चीजे बनाई किस लिए है? (बाते करते हुए दोनो एक पार्क मे किसी आराम चेयर पर बैठ जाते है)।

जैनेन्द्र —यही तो तुम्हारी बहुत बडी भ्रान्ति है। हम अपने अच्छे-बुरे कार्यों पर पर्दा डालने के लिए झट से धर्म या परमात्मा की आड ले लेते हैं। न तो परमात्मा ने सृष्टि की रचना की है, और न ईश्वर हमे अच्छे-बुरे कर्मों का फल देता है।

महेश :—यह बात तो आज नई सुन रहा हू

यार । ससार की रचना परमात्मा ने नही की, तो फिर किसने की है ? एक छोटा-सा कार्य भी विना किसी कर्ता के नही होता है, तो इतनी वडी सृष्टि विना किसी कर्ता के कैसे वन सकती है ?

जैनेन्द्र —सृष्टि को किसी के द्वारा निर्मित मानना ही गलत एव अनेकानेक विपत्तियो का कारण है । वास्तव मे सृष्टि किसी के द्वारा निर्मित है ही नही, सृष्टि अनादि-अनन्त है । इसका कभी प्रारम्भ या नूतन निर्माण नही हुआ है और न कभी समूल नाश ही होगा । हा, खण्ड प्रलय जरूर हो सकता है, सम्पूर्ण प्रलय नही । याने कभी हजार दो हजार मील का क्षेत्र भूकम्प आदि से ग्रस्त होकर जल का स्थल और स्थल का जल वन सकता है, किन्तु पूरी पृथ्वी कभी नष्ठ नही होती है, जरा तुम खुद अपनी बुद्धि से विचार करो । यदि ईश्वर ने ससार की रचना की है तो उसके पहले क्या था, और ईश्वर स्वय कहा रहता था ।

महेश —यह प्रश्न तो मेरे दिमाग मे भी कई वार उठता है । जब मैं पिताजी के साथ हरिद्वार गया तब एक महात्मा जी से यह प्रश्न पूछा भी किन्तु उनके समाधान से पूरी सन्तुष्टि नही हुई ।

जैनेन्द्र :—महेश, जरा सोचो, एक क्षण के

लिये मान लें कि ईश्वर ने ससार की रचना की, तो मैं पूछता हू ईश्वर ने परम कारुणिक दयावान होकर इतनी दु खपूर्ण रचना क्यो की । एक समभावी पिता भी अपनी सन्तान को दु खी नही देखना चाहता है, तो ईश्वर तो ससार का पिता माना जाता है, वह अपनी ही सृष्टि को दु.खी क्यो बनायेगा ?

महेश —वास्तव मे तर्क तो तुम्हारा ठीक है, किन्तु प्राय. अधिकाश लोग कहा करते हैं कि ईश्वर की इच्छा के बिना पेड़ का पत्ता भी नही हिलता है। आखिर इसमे भी कुछ तथ्य होगा । इतने अच्छे-अच्छे बुद्धिमान व्यक्ति ईश्वर को कर्ता मानते हैं, वे सब मूर्ख तो नही है ।

जैनेन्द्र मैं यह नही कह सकता कि दुनिया मे सभी मूर्ख हैं, किन्तु अधिकाश लोग गतानुगतिक होते हैं, वे भी अपनी परम्परागत चली आ रही मान्यताओ के ही ज्ञाता होते हैं । यह मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि अपनी परम्परागत मान्यताओ मे स्वाभाविक आग्रह होता है । ईश्वर की इच्छा के बिना पेड का एक पत्ता भी नही हिलता है, तो इसका मतलब हुआ ससार की सूक्ष्मतम क्रिया भी ईश्वर प्रेरित ही होती है । अब जरा सोचो चोर को चोरी करने की प्रेरणा देता है, और पुलिस को पकड़ने की प्रेरणा

कौन देता है । यदि ईश्वर तो ऐसे परम्परा विरोधी कार्य ईश्वर क्यो करता है ? दूसरी बात, फिर किसी भी कार्य मे पुण्य-पाप किसी व्यक्ति को नही होगा । क्योकि सभी का प्रेरक तो ईश्वर ही है । यद्यपि इसके समाधान के लिए कुछ लोग तर्क देते हैं कि जीव अपने कर्मों से सुखी-दुखी होता है । ईश्वर का कार्य तो केवल कर्मानुसार फल देने का है । किन्तु यह तर्क युक्ति सगत नही लगता है । प्रथम तो अच्छे-बुरे कर्म करने की प्रेरणा कौन देता है ? क्योकि ईश्वर की इच्छा के बिना तो कुछ भी नही हो सकता है । दूसरा, कर्म हम करें और फल देने के लिए ईश्वर बीच मे क्यो आयेगा ? यह तो वैसा ही होगा कि भग तो हम खायें और नशा देने के लिए ईश्वर आयेगा ।

महेश —वास्तव मे तुम तो "छुपे रुस्तम" निकले यार । लगता है एकान्तवास मे तुम यही कुछ अध्ययन किया करते हो । बहुत गहरा दार्शनिक नालेज प्राप्त कर लिया है तुमने । अब तो तुम्हारे सम्पर्क मे रहना पडेगा ।

जैनेन्द्र —किन्तु मेरी सगत में तुम्हारा, यह खाना-पीना सब कुछ छूट जायेगा ।

महेश —नहीं दोस्त, यह तो नहीं हो

है । ये तो कुछ मन वहलाने के साधन हैं । मान लो ईश्वर ने इन्हे नही वनाया है, पर प्रकृति की देन तो है ही । प्रकृति की चीजो का उपयोग करने का हमे पूरा अधिकार है । (कहते हुए पैकेट मे से दो सिगरेट निकाल कर जैनेन्द्र की ओर वढाता है ।)

जैनेन्द्र '—महेश, फिर तुम भटक रहे हो । पहले तो सिगरेट को जेव मे रक्खो, फिर मैं वात करूगा तुमसे ।·········

महेश .—(वीच मे वात काटकर) यह नही होगा दोस्त, अच्छा तुम न पीओ, मैं तो एक सिगरेट पीऊगा । (कहते हुए सिगरेट जला लेता है । इतने मे प्रसन्न भी स्कूटर से बगीचे मे पहुच जाता है ।)

(महेश एकदम चौक कर खडा हो जाता है, प्रसन्न स्कूटर को खडा करता है ।)

प्रसन्न '—कहा आकर छिपे वैठे हो यार महेश ? मैं तो ढूढ कर हैरान हो गया ।

महेश :—पर दोस्त तुम ससुराल से कब आ गये ? अभी दो घण्टे पूर्व तो मैं घर जाकर आया । क्या हुआ श्रीमती जी को साथ ले आये कि ? या फिर भागना पड़ेगा ससुराल ?

प्रसन्न :—अरे यार, बडी परेशानी है, पिताजी की इच्छा के विरुद्ध तीन बार तो जा चुका हू । ससुराल वाले भेजते ही नही हैं । कहते है बी० ए० फायनल की परीक्षा दो महीने बाद पूरी होने वाली है, उसके बाद ही भेजेंगे । मैं थोडा झगडा करके अभी-अभी ५ बजे की गाडी से चला आ रहा हू ।

महेश —बडा अच्छा हुआ । दो महीने मे अपनी भी एम० ए०-सी० की परीक्षाए पूरी हो जायेंगी और तुम आराम से पढ सकोगे ।

प्रसन्न रहने दे यार तेरी पढाई को । मेरा मन अब पढाई से उचट गया है । अपने को कौन-सी नौकरी करनी है ?

महेश '—नही, इन विचारो से मे सहमत नही हू । दो महीने के लिए एम० एस०-सी० की डिग्री को खो देना मैं बुद्धिमता नही मानता । चाहे नौकरी न करना हो, किन्तु 'ग्रेजुएशन' का अपना महत्व है । असल मे तुम्हारे पिताजी ने बडी भूल की है । उन्हे तुम्हारी शादी पाच माह बाद करनी चाहिए थी ।

प्रसन्न '—अच्छा, छोडो इन उपदेशो को । सिगरेट-विगरेट कुछ लाया है कि नही ?

महेश —लाया तो सब कुछ हू, किन्तु आज

जैनेन्द्र सामने बैठा है ।

प्रसन्न —(अचानक जैनेन्द्र की ओर देखते हुए) ओहो, माई डियर जैनेन्द्र, क्षमा करना । मैंने इधर नही देखा पर आज आप इधर कैसे ?

जैनेन्द्र —क्षमा की क्या बात है इसमे ? दो की बाते होती हैं तो तीसरे को शान्त सुनना ही चाहिये । वैसे मैं प्रतिदिन घूमने आया करता हू । आज महेश भी साथ हो गया ।

प्रसन्न :—तो कैसी रही महेश की दोस्ती ?

जैनेन्द्र .—दोस्ती-वोस्ती अपनी किसी से नही है । वैसे ही मिल गये तो दो बातें करने लग गये ।

प्रसन्न '—तो क्या चर्चा चल रही थी ? चलो हम भी सुनेंगे । (कहते हुए तीनो समीप-समीप बैठ जाते हैं ) ।

महेश '—प्रसन्न, जैनेन्द्र तो वास्तव मे छिपा हुआ रुस्तम ही निकला यार । बडा गहरा दार्शनिक अनुभव है, इसको । अभी-अभी ईश्वर कर्तृत्व के विषय मे हमारी गहरी चर्चा हुई । जैनेन्द्र ने प्रबल युक्तियों के साथ यह सिद्ध कर दिया कि कोई ईश्वर ा कर्ता हर्ता नियन्ता नही है । इसकी युक्ति

इतनी ठोस थी कि मेरी कोई युक्ति उसके आगे नही चल सकी ।

प्रसन्न —क्या कहा ? ससार का रचयिता कोई ईश्वर नही है ?

जैनेन्द्र —वाह प्रसन्न, तुम जैन होकर भी इतना नही जानते ? जैन दर्शन का तो यह मौलिक सिद्धान्त है कि सृष्टि अनादि अनन्त है, इसका कोई नूतन निर्माण नही हुआ है, जिससे कि इसका कोई निर्माता हो ।

प्रसन्न —मुझे धर्म और दर्शन का बोध नही है क्योकि मैं कभी साधु सन्तो के सम्पर्क मे गया ही नही । शुरू से मेरी इस विषय मे रुचि भी नही रही है ।

जैनेन्द्र —यह तो मुझे मालूम है । पर इस अज्ञान के कारण ही तुम गलत मार्ग पर चले जा रहे हो । अगर थोडा बहुत सन्त समागम होता और कुछ धार्मिक अध्ययन होता, तो सम्भवत आपका जीवन कुछ और ही निखार लाता ।

प्रसन्न —कैसी अजीब बात कर रहे हो यार । हम कौन से गलत मार्ग पर जा रहे हैं ? सिगरेट का

जहा तक सवाल है, इसमे कौन सी बुरी बात है ? थोडी थकान उतारकर मन को हल्का कर लेते है ।

जैनेन्द्र.—हा मित्र, अभी तो सिगरेट पीना कोई बुरा नही है और थोडी देर बाद शराब और मास मे भी बुराई नही, अच्छाई ही दिखाई देगी ।

प्रसन्न (थोडा सकपकाता हुआ) शराब की कौन बात कर रहा है यार ? कभी-कभी बीयर लेते हैं । उसमे तो केवल १० प्रतिशत ही अलकोहल रहता है । उसे कोई शराब थोडे ही कहते हैं ?

महेश —प्रसन्न, तुम जनेन्द्र से नही जीत सकोगे छोड़ो इस चर्चा को ।

जैनेन्द्र हारने जीतने का सवाल नही है मित्रो । सवाल है अपने बहुमूल्य जीवन का । प्रत्येक प्रवृत्ति के पूर्व हमे उसकी अच्छाई और बुराई का गहराई से अध्ययन करना चाहिये । सैकड़ो लोगो को जाते हुए देखकर एकदम किसी मार्ग पर बिना सोचे समझे चल पडना बुद्धिमत्ता नही है । शराब तो जीवन का भयकर शत्रु है ही, परन्तु अभी जरा सिगरेट पर ही विचार करो । इसमे आध्यात्मिक हानि तो है ही, साथ ही शरीर को कितना नुकसान होता है । तुम मेरी या धर्म की बात को भले ही न

मानो, विज्ञान की बात को तो सच मानोगे ? अमेरिका के वैज्ञानिको ने यह घोषणा की है कि—"सिगरेट पीने से कैन्सर जैसा भयकर रोग पैदा हो जाता है । एक सिगरेट का धुआ यदि बाहर न निकाला जाय तो उससे मृत्यु तक हो सकती है ।" आये दिन कई घटनाए घटती हैं । अभी कुछ दिनो पूर्व रमेश सोनी का मित्र कैप्स्टन का एक कश खीचते ही सदा के लिए सो गया ।

महेश —तो इतने सब लोग पीते हैं, वे क्या पागल ही हैं ?

जैनेन्द्र .—पागलपन की बात नही है । अधिकाश जनता नासमझ और अन्धानुकरणशील होती है । जो लोग समझते है वे एकदम से धूम्रपान का त्याग कर रहे हैं । वैज्ञानिक शोध के पश्चात् केवल अमेरिका मे लगभग १० लाख व्यक्तियो ने धूम्रपान को बुराई को समझ कर उसका त्याग कर दिया । उनमे एक लाख तो डॉक्टर ही है ।

तुमने यदि कुछ दिनो पूर्व आई न्यूज पढ़ी हो, तो तुम्हे ज्ञात होगा "अमेरिका लग एसोसियेशन" ने धूम्रपान की विनाशकारी लीला को कितना स्पष्ट किया है । उसकी शोध के अनुसार—

१. धूम्रपान का धुआ यदि बिल्कुल समीप से ही आ रहा है तो धूम्रपान करने वाले व्यक्ति के साथ-साथ बैठे व्यक्ति को उतनी ही हानि होती है।

२ धूम्रपान करने वाले व्यक्तियो के बालक-बालिकाओ मे फेफडो व श्वासनली से सम्बन्धित बीमारिया लगभग दुगुनी पाई जाती है।

३. सयुक्त राज्यीय सर्जन-जनरल के अनुसार धूम्रपान नही करने वालो को भी स्वच्छ वायु प्राप्त करने का उतना ही अधिकार है, जैसा कि धूम्रपान करने वालो को बीडी सिगरेट पीने का तथाकथित अधिकार है। मैं यह कहूगा कि यह वायु प्रदूषण का नाजायज अधिकार है। अब उपयुक्त समय आ रहा है कि धूम्रपान करने पर रोक लगाई जाए। भोजनालयो, होटलो सिनेमाघरो रेलगाड़ियों एव बसो मे तो इसका निषेध होना ही चाहिये।"

प्रसन्न .—वाह दोस्त। बड़ा गजब का दार्शनिक अध्ययन किया है तुमने भी। बाते तो तुम्हारी सेन्ट-परसेन्ट तर्क सगत हैं। वास्तव मे यह तो हमारा एक व्यसन ही हो गया है।

जैनेन्द्र :—मित्र, जैसा तुम्हारा यह व्यसन है, मेरा अच्छे विद्वान मुनियो के सम्पर्क मे

जाना और दार्शनिक अध्ययन करना व्यसन है । व्य-सन का अर्थ सिगरेट और शराब पीना ही नही है । व्यसन का अर्थ है किसी भी प्रवृत्ति में मन को गह-राई से जोड देना । हम चाहे तो आध्यात्मिक प्रवृत्ति मे भी मन को एडजस्ट कर सकते हैं, और चाहे तो इन दुर्व्यसनो मे भी ।

महेश :—अच्छा अब हम भी अपने व्यसनो को छोडकर तुम्हारा ही सग और व्यसन कर लेंगे लेकिन आज केवल एक दिन तुम भी हमारा व्यसन करके तो देखो । प्रकृति की सभी वस्तुओ का अनुभव तो होना ही चाहिये ।

जैनेन्द्र :—महेश, फिर तुम उसी मजाक पर आ गये प्रकृति की सभी वस्तुओ का अनुभव करना है तो फिर एक बार अशुचि को भी चख कर देखो और विष कैसा होता हैं, उसका भी एक बार अनुभव तो करना चाहिए फिर तुम क्या इस ससार मे जीवित रहोगे ?

प्रसन्न —बडा गजब का टान्ट कसा यार तुमने भी । तुम तो वाइन नही पीओगे, पर हमे अशुचि अवश्य खिला दोगे ।

जैनेन्द्र —नही, ऐसी वात नही हैं मैंने तो

केवल महेश की बात का उत्तर दिया है कि प्रकृति की सभी चीजों का अनुभव करना चाहिए ।

महेश :—अच्छा कल से हम सब कुछ छोड देगे आज जो ले आये हैं तो इसका उपयोग कर लें। कहते हुए महेश ने वाइन की दोनो बोतलें निकाल ली और एक प्रसन्न की ओर बढाते हुए कहने लगा दोस्त बस आज आखिरी मजा ले लें । [प्रसन्न एक बाटल हाथ में ले लेता है और दोनों पीने लगते हैं] ।

जैनेन्द्र :—दोस्तो, अभी इस जहर मे मजा समझ रहे हो ।

महेश :—वाह यार, बन्दर क्या जाने अदरख का स्वाद ! मजा तो पीने वाले ही जानते हैं । तुम क्या जानोगे ?

जैनेन्द्र :—अच्छा दोस्तो. अभी बताऊंगा मैं मजा (कहता हुआ उठकर थोडी दूर जाकर दूसरी कुर्सी पर बैठ जाता है और उनकी सभी हरकतें देखता रहता है) ।

प्रसन्न :—(शराब की घूंट लेता हुआ) बातें तो जैनेन्द्र की बडी महत्वपूर्ण हैं यार ।

महेश :—(खाली बोतले फेंककर सिगरेट जलाते हुए) अरे रहने दे यार अपनी विद्वता की शेखी बघारता है ।

प्रसन्न —नही, मैं तो अब कल से सब छोड दूगा । अब पैसे की वरबादी और शरीर की हानि हम तो नही करेंगे । लाभ तो इसमे कुछ है नही । कही कोई बीमारी हो गई तो मारे-मारे फिरेंगे डॉक्टरो के पास ।

महेश —(नशे मे झूमता हुआ) अरे रहने दे यार ! तेरे बाप के ही पैसे हैं क्या ? हम भी पैसा रखते हैं…… ।

प्रसन्न —अबे नालायक, बाप-दादे को गाली देता है । मेरे पैसो से गुलछर्रे उडाता है, और बक-बक करता है…… …!

[दोनो नशे मे बेभान बन जाते हैं । गाली गलोज करते हुए मारपीट पर उतर जाते हैं । प्रसन्न को चोट लगती है । खून निकल आता है । दोनो भूमि पर वेसुध होकर लुढक जाते हैं । जैनेन्द्र दोनो की दयनीय दशा पर तरस खा रहा है । जव दोनो गिर पडते हैं, तब समीप आकर दोनो के हाथ की घड़िया खोल लेता है फिर दोनो के पेन्ट, बुश्शर्ट

खोलकर पैसे निकाल लेता है। पेन की स्याही से दोनों का मुंह पोत देता है। प्रसन्न की जेब से स्कूटर की चाबी निकाल लेता है और कपड़े लेकर दोनो को वही केवल अण्डरवीयर और वनियान मे वेहोश छोडकर स्कूटर से अपने घर चला जाता है। रात्रि को लगभग ११ बजे दोनो का नशा उतरता है। प्रसन्न शीत से कापता हुआ उठता है। और महेश को हाथ पकड कर उठाता है। दोनो अपनी दशा देखकर एक-दूसरे को भेदभरी दृष्टि से देखते हैं।

प्रसन्न :—(ठण्ड से कापते हुए) आज तो बडी बुरी बिताई। मुझे बहुत ठण्ड लग रही है यार। (टाइम देखने के लिए कलाई की ओर देखते हुए) अरे घडी कहा गई यार ?

महेश :—(अपना हाथ देखते हुए) अरे मेरी भी घडी गायब ? (अचानक दोनो एक दूसरे के शरीर को देखते हुए अरे दोनो नग्न खडे हैं।)

प्रसन्न .—(आसपास दृष्टि फैलाता हुआ) अरे मेरा स्कूटर भी गायब ! ! ! अब तो बडी डाट पडेगी पिताजी की। एक साथ दस हजार का लॉस।······अरे पेन्ट की जेब मे दो हजार रुपये भी।··· ···(रोने जैसी शक्ल बना लेता है) मार दिया तेरे इस आखिरी मजे ने इस शक्ल मे घर कैसे

बीडी, सिगरेट और शराब को नही छुयेगे ।

महेश .—इतना क्या घबराते हो यार । तुम बेफिक्र रहो । तुम्हारे पैसे, स्कूटर, घडी सब कुछ मिल जायेगे । आखिर मेरी भी तो दो सौ रुपये की घड़ी गई है । तुम निश्चित समझो यह सब करिश्मा जैनेन्द्र ने दिखाया है

प्रसन्न :—तुझे अपने दो सौ रुपयो और घडी की चिन्ता है, मेरी तो ८०० रुपये की घड़ी, २००० रुपये कैश, ५०० रुपये का सूट और ८००० रुपये का स्कूटर, कुल ११-१२ हजार का एक साथ लॉस । सपोज करो जैनेन्द्र ले गया हो, पर यदि कोई दूसरा ले गया होगा, तो कैसे मुह दिखायेगे घर जाकर ?

महेश :—दूसरा कोई इतनी हिम्मत नही कर सकता है ।

प्रसन्न .—हिम्मत क्यों नही कर सकता है ? और इसमे हिम्मत की क्या बात है ? हम-तुम तो नशे मे वेभान पडे थे, कोई चड्डी-बनियान भी खोलकर ले जाता, तो क्या करते हम ? आज तो मार दिया तुम्हारी शराब ने । तुम भी यदि प्रण करते हो कि आज से नही छुयेगे शराब और सिगरेट को, तभी हमारी मित्रता निभेगी, अन्यथा आज से दोस्ती

बीडी, सिगरेट और शराब को नही छुयेगे ।

महेश .—इतना क्या घबराते हो यार । तुम बेफिक्र रहो । तुम्हारे पैसे, स्कूटर, घडी सब कुछ मिल जायेगे । आखिर मेरी भी तो दो सौ रुपये की घड़ी गई है । तुम निश्चित समझो यह सब करिश्मा जैनेन्द्र ने दिखाया है

प्रसन्न :—तुझे अपने दो सौ रुपयो और घडी की चिन्ता है, मेरी तो ८०० रुपये की घडी, २००० रुपये कैश, ५०० रुपये का सूट और ८००० रुपये का स्कूटर, कुल ११-१२ हजार का एक साथ लॉस । सपोज करो जैनेन्द्र ले गया हो, पर यदि कोई दूसरा ले गया होगा, तो कैसे मुंह दिखायेगे घर जाकर ?

महेश :—दूसरा कोई इतनी हिम्मत नही कर सकता है ।

प्रसन्न .—हिम्मत क्यों नही कर सकता है ? और इसमे हिम्मत की क्या बात है ? हम-तुम तो नशे मे बेभान पडे थे, कोई चड्डी-बनियान भी खोलकर ले जाता, तो क्या करते हम ? आज तो मार दिया तुम्हारी शराब ने । तुम भी यदि प्रण करते हो कि आज से नही छुयेगे शराब और सिगरेट को, तभी हमारी मित्रता निभेगी, अन्यथा आज से दोस्ती

कट । ।

महेश —हमे क्या लेना है शराब से । हम तो इसे जानते ही नही थे, यह रग तुम्ही ने चढाया था । हमारे पास कहा इतने पैसे कि हम इतनी महगी बाटल खरीद सके !

प्रसन्न .—पर अब मैं ही इस रग को उतारने को कह रहा हू । बोलो, छोडना है कि नही ?

महेश —अच्छी बात है । छोड दिया आज से ही । चलो अब कही शरण ढूढे ।

प्रसन्न —पर इस पाजीशन मे जायेंगे कहा ? न मालूम कितना बजा होगा । सभी तरफ सुनसान लग रहा है । रास्ते मे कही पुलिस-वूलिस मिल गयी, तो चोर ही समझेगी ।

महेश —इतना क्या डरते हो यार ? अपने भी दो है । साले पुलिस वाले को भी सम्भाल लेंगे ।

प्रसन्न —लगता है अभी तेरा नशा पूरा नही उतरा है । खैर छोडो, पर अब कहा जाना है ?

महेश —और कहा जाना है ? गली के सीधे जैनेन्द्र के यहा पहुचें । (दोनो वहा

रात्रि के लगभग दो बजे ठण्ड से ठिठुरते हुए और पुलिस से अपने आपको बचाते हुए किसी तरह जैनेन्द्र के घर पहुचे) ।

महेश —(जोर से आवाज लगाता हुआ) जैनेन्द्र ! ! (दो चार आवाजे सुनने के पश्चात् जैनेन्द्र अपने बेडरूम से निकलकर बाहर आता है ।)

जैनेन्द्र —(दरवाजा खोलते हुए कठोर स्वर मे) कौन चिल्ला रहा है यहा पर आधी रात के समय ? (बाहर दोनो की बदसूरत देखकर जल्दी मे पुन. दरवाजा बन्द कर देता है और जोर से चिल्लाता है) कौन हो तुम, काले, लाल मुह बनाये हुए ? भाग जाओ यहा से नही तो अभी पुलिस को फोन करता हू ।

प्रसन्न —(कापता हुआ) अरे दादा, अब तो बहुत हो गई । कम-से-कम जोर से मत चिल्लाओ । कही तुम्हारे पिताजी उठ जायेगे । इतना अधिक क्यो जलील कर रहे हो हमे ?

जैनेन्द्र .—(आवाज पहचानकर मन ही मन हसता हुआ) अरे कौन, प्रसन्न बोल रहा है ? (कहते हुए किवाड खोलकर बाहर आ जाता है) यह क्या ""न्दरो का स्वाग बनाया है तुमने आज ?

महेश —अब ज्यादा बुद्धू मत बनाओ। पहले हमारे कपड़े दे दो।

जैनेन्द्र —कैसे कपड़े तुम्हारे ? मुझे क्या मालूम, मैं तो तुमसे पहिले ही वहा से चला आया था। तुम दोनों लड़-झगड़ रहे थे।

प्रसन्न —(एकदम चिन्तित होता हुआ) क्या हमारी घड़ी, स्कूटर और सूट तुम नहीं लाये ?

जैनेन्द्र :—नहीं, मैं तो तुमसे पहिले ही वहा से चला आया था और तुम मुझ पर झूठा आरोप लगाते हो। अभी फोन करता हू पुलिस को और इसी हालत मे एरेस्ट करवाता हू। (कहते हुए पुन गेट के भीतर जाने लगता है। प्रसन्न लपककर उसके पैर पकड लेता है और रोने लगता है। महेश भी हतप्रभ हो जाता है।)

प्रसन्न —(रोते हुए) जैनेन्द्र, अब जले पर नमक मत छिड़को। केवल रात भर की शरण दे दो तुम्हारा उपकार मैं जीवन भर नहीं भूलूंगा। आज तो मैं लुट गया। स्कूटर, घड़ी, सूट सब कुछ गायब। तुम्हारा कहना नहीं माना। रात को दोनों ने खूब शराब पी और पीछे से न मालूम किसने हमारी यह दशा कर दी। मित्र, माफ कर दो।

बस रात भर के लिए स्थान और पहनने के लिए केवल एक पायजामा कमीज ही दे दो। (कहते हुए सिसकिया भर कर रोने लग जाता है।)

जैनेन्द्र :—(प्रसन्न को उठाता हुआ) अरे यार, तुम तो रोने ही लग गये। अच्छा चलो, भीतर चलो। (तीनो जैनेन्द्र के शयन कक्ष में चले जाते हैं और खाट पर बैठ जाते है।)

महेश :—पहले जरा पानी और साबुन तो दो, यार! थोडा मुंह साफ कर लें। कोई जोरदार उस्ताद मिला है। मेरा २०० रुपये का प्रसन्न का ११-१२ हजार का माल तो ले गया, सो ले गया, साथ मे हमे पूरे लाल-काले मुंह का वन्दर भी वना गया।

जैनेन्द्र :—हा दोस्त, जंच तो पूरे रहे हो। एक बार बाबूजो (पिताजी) को तो बता दूं शराब का मजा। फिर दूंगा पानी-साबुन। (कहता हुआ पिताजी को जगाने के लिए उठने लगता है कि प्रसन्न फिर रोने लगता है और हाथ पकड लेता है।)

प्रसन्न :—दोस्त, क्यों अधिक जलील कर रहे हो? पिताजी के सामने क्यो इन्सल्ट और पर्दाफाश करवाते हो?

जैनेन्द्र :—अच्छा, तो बताओ अब फिर कभी

शराब, सिगरेट (महेश की ओर व्यंग्य से देखते हुये) प्रकृति की चीजों का, मजा लेना है ?

महेश —यह तो हम वहां से प्रतिज्ञा करके ही आ रहे हैं कि आज से इन चीजों को छूयेंगे भी नहीं और कुछ कराना हो, तो फिर करा दो, इतने मूर्ख तो नहीं हैं कि इतने से भी शिक्षा न लें।

जैनेन्द्र :-अच्छा, तो यह आखिरी मजा ही था !

(कहते हुए दोनों को बाथरूम में ले जाता है। दोनों साबुन से अपना मुंह साफ करते हैं, हाथ-पाव धोकर बाहर आते हैं। तब जैनेन्द्र उन्ही के सूट पहनने को देता है और अपने हाथ से दोनों की कलाईयों पर घड़ी बाध देता है। २००० रुपये प्रसन्न के हाथो में थमा देता है।)

प्रसन्न :-(खुशी से उछलता हुआ) अरे यार ! खूब छकाया तुमने भी हमको ! एक साथ रुला भी दिया, हंसा भी दिया। किन्तु इन सबके साथ स्कूटर कहां है ?

जैनेन्द्र —(मन-ही-मन हंसता हुआ) स्कूटर तो मैं नहीं लाया यार।

बस रात भर के लिए स्थान और पहनने के लिए केवल एक पायजामा कमीज ही दे दो। (कहते हुए सिसकिया भर कर रोने लग जाता है।)

जैनेन्द्र :—(प्रसन्न को उठाता हुआ) अरे यार, तुम तो रोने ही लग गये। अच्छा चलो, भीतर चलो। (तीनो जैनेन्द्र के शयन कक्ष मे चले जाते हैं और खाट पर बैठ जाते है।)

महेश :—पहले जरा पानी और साबुन तो दो, यार! थोडा मुंह साफ कर लें। कोई जोरदार उस्ताद मिला है। मेरा २०० रुपये का प्रसन्न का ११-१२ हजार का माल तो ले गया, सो ले गया, साथ मे हमे पूरे लाल-काले मुंह का बन्दर भी बना गया।

जैनेन्द्र :—हां दोस्त, जच तो पूरे रहे हो। एक बार बाबूजी (पिताजी) को तो बता दूं शराब का मजा। फिर दूंगा पानी-साबुन। (कहता हुआ पिताजी को जगाने के लिए उठने लगता है कि प्रसन्न फिर रोने लगता है और हाथ पकड लेता है।)

प्रसन्न :—दोस्त, क्यो अधिक जलील कर रहे हो? पिताजी के सामने क्यो इन्सलट और पर्दाफाश करवाते हो?

जैनेन्द्र :—अच्छा, तो बताओ अब फिर कभी

बस रात भर के लिए स्थान और पहननें के लिए केवल एक पायजामा कमीज ही दे दो। (कहते हुए सिसकिया भर कर रोने लग जाता है।)

जैनेन्द्र :—(प्रसन्न को उठाता हुआ) अरे यार, तुम तो रोने ही लग गये। अच्छा चलो, भीतर चलो। (तीनो जैनेन्द्र के शयन कक्ष में चले जाते हैं और खाट पर बैठ जाते है।)

महेश :—पहले जरा पानी और साबुन तो दो, यार! थोडा मुंह साफ कर लें। कोई जोरदार उस्ताद मिला है। मेरा २०० रुपये का प्रसन्न का ११-१२ हजार का माल तो ले गया, सो ले गया, साथ मे हमे पूरे लाल-काले मुंह का बन्दर भी बना गया।

जैनेन्द्र :—हा दोस्त, जच तो पूरे रहे हो। एक बार बाबूजी (पिताजी) को तो बता दूं शराब का मजा। फिर दूंगा पानी-साबुन। (कहता हुआ पिताजी को जगाने के लिए उठने लगता है कि प्रसन्न फिर रोने लगता है और हाथ पकड लेता है।)

प्रसन्न :—दोस्त, क्यो अधिक जलील कर रहे हो? पिताजी के सामने क्यो इन्सलट और पर्दाफाश करवाते हो?

जैनेन्द्र :—अच्छा, तो बताओ अब फिर कभी

प्रसन्न :—(फिर रुआसा होकर) खैर ८००० का लॉस होने पर भी इज्जत तो बची । पिताजी से कह दूंगा रात को एक्सीडेट हो गया और स्कूटर पुलिस द्वारा पकड लिया गया ।

जैनेन्द्र '—देखो, एक शराब से कितने दुर्गुण घुस जाते हैं जीवन मे ! अब झूठ बोलकर पिताजी को भी धोखा देना पडेगा ।

महेश —पर ऐसा हो नही सकता । जब पेण्ट खोलकर तुम ले आये, तो स्कूटर और कोई नही ले जा सकता, क्योकि स्कूटर की चाबी तो पेन्ट की जेब मे ही थी ।

जैनेन्द्र '–(हसता हुआ) फिर मुझ पर आक्षेप ! फोन करू पुलिस को ? (तीनो ठहाके मारकर हसते है ।)



प्रसन्न :—(फिर रुआसा होकर) खैर ८००० का लॉस होने पर भी इज्जत तो बची। पिताजी से कह दूंगा रात को एक्सीडेंट हो गया और स्कूटर पुलिस द्वारा पकड लिया गया।

जैनेन्द्र :—देखो, एक शराब से कितने दुर्गुण घुस जाते हैं जीवन मे! अब झूठ बोलकर पिताजी को भी धोखा देना पडेगा।

महेश —पर ऐसा हो नही सकता। जब पेण्ट खोलकर तुम ले आये, तो स्कूटर और कोई नही ले जा सकता, क्योकि स्कूटर की चाबी तो पेन्ट की जेब मे ही थी।

जैनेन्द्र —(हसता हुआ) फिर मुझ पर आक्षेप! फोन करू पुलिस को? (तीनो ठहाके मारकर हसते है।) ☐

एकाकी—

जैन युवतियो से—

# सामायिक साधना और शिक्षित युवती

स्थान घर्म स्थानक समय दोपहर

(एक कच्ची इमारत, जिसमे एक बरामदा, दो-चार कमरे, और एक चौक, कमरो पर ताले लगे है। अहाते और चौक मे फर्श पर मिट्टी पडी है, और दीवारो पर घूल जम रही है। लगता है कई महीनो से वहाँ झाडू भी नही लगाया गया है। पाच-सात महिलायें सामायिक लेकर घर्माराधन के लिए बैठी हैं। घर्म चर्चा चल रही है…? ? ?)

पहली—काई रतनी बाई, आज देऊबाई आया कोनी ?

दूसरी—थाने ठा कोनी, बारे तो सासु-बहुओ मे भारी झगडो मचयोड़ो है।

तीसरी—आज-कालरी बहुआ काई है, दो-चार किताबा भणली अने रोब जमावा लागी।

चोथी—नी सा, आ बात कोनी देऊबाई री बहू

तो घणी शाणी है। आप जाणो हो देऊबाई रो सुभाव (स्वभाव) ही इसो है। नई बीनणी ने किकर काई राखणो आ कला वा मे कोणी।

पहली—अरे छाना रो, वी आई ग्या देऊबाई तो।

(सभी चुप हो जाती हैं, और क्षण मे बात बदल देती है। देऊबाई भी मुंहपत्ती लगाकर सामायिक लेकर बैठ जाती है।)

एक महिला—घणा मोड़ा आया, देऊ बाई ?

देऊ बाई—अरे घापूबई, गिरस्थी रा झगड़ा ई घणा खोटा। काई-न-काई फदो लाग्यो इज रे।

घापू बाई—काई व्यो गिरस्थी थारे इज पाछे लागी है काई ? माणे भी तो चार-चार बहुआ है, टाबर-टीगर है।

देऊबाई—आपरे चार है, और चारो लक्ष्मी जेड़ी है, पण मारे तो एकज असी आई के रोज-रोज रो छाती-कुटो (महाभारत) मच गयो है।

चौथी—नी सा, आ बात तो साची कोनी, मूं तो आपरे पड़ोस मे इज रू हू। आपरी बहू तो घणी शाणी, चतुर अने फूटरी है सा।

देऊबाई—हा इ बड़ाईया कर कर ने थाईज

है । मारी वू ने बगाडवा वाली थाईज हो ।

चौथी—देखो देऊ बाई, मु डो सभालने बोल्या करो । कीराई ऊपर झूठो आल (दोष) लगाणो ठीक कोनी । थाने मारो थारा घरे आवणो नी गमे, तो आज से ही नी आऊला, नी थाणी वू सू बात करु ला । मारे की लेणो थारी वूं सू ।

देऊ बाई—हा, ई रीसणां तो मु ई घणा जाणू । कतरी दाण तो कई दी दो अबे नी आऊला, पण फेर वठे इज जाई जाई न घसे ।

चौथी—देखो देऊबाई, वणीदन था झगडो कर्‌यो जठा केडे कदी आई मु थाका घरे ई साची झूठी वाता माने पसन्द कोनी ।

देऊ बाई—हा, हा जाणू सामायिक मे झूठ बोलता लाज कोनी आवे । परसु रा दन पाछे वाडा मे वाता कुण कर री ही ? मने सब खबर है ।

चौथी—वा बाई थू साची, मु झूठी सही । कई कर लेई थू मारो । मुई देख लेंऊ ओर अवे तो देखली जे । थाने न्यारा-न्यारा नी करने बताऊ तो मारो ई नाम घन्नी नी ?'

देऊ बाई—ओइज काम पल्ले पड़्यो थारे तो

घरा-घरा में फूट डलाणी, मा-बेटा ने न्यारा कराणा। लाण वा पूनमबाई थने रोजाना झूरे।

एक महिला—वा अबे तो घणी वेईगी, छोड़ोनी परी याबाता ने धर्म-ध्यान तो कई व्हे कोनी। रोज-रोज रो ओई धधो है। अणी बचे तो मैं मारे-घरे सामायिक करा तो ई हाऊ।

दूसरी—घरे गुम सुम बैठी ने काई करा। अठे काईक बाता रो रस तो आवे। झगडो तो कदीक बेइज्या वे है, कोई रोज रोज थोड़ी व्हे।

पहली—नी बाई, मू तो देखरी हू एक दो दिन मे कदी कीरो तो कदी कीरो झगड़ो चालतो ज रेवे। मूं तो मारे काल सूं नी आऊ।

(सामायिक पाल कर धीरे-धीरे सभी जाने लगती है। देऊबाई जो देरी से आई थी, काल शेष होने से रुक गई और एक महिला को और रोक लिया।)

देऊ बाई—देख लीधो राजी बाई, कसी डाकण जैसी आखा काडे। अने, के इगी के "न्यारा-न्यारा कराईने नी छोड़ू तो मारो ई नाम धन्नी नी।" बाई [illegible] ऊ घणो डर लगे (कहती हुई

देऊवाई रोने लगी । राजी वाई ने आश्वस्त करते हुए कहा) कईनी कर सके वा आपणो । (कुछ समय तक वातें करके वे भी चली गईं ।)

## दूसरे दिन

स्थान—वही ।

(लगभग पाच-सात वे ही वहनें सामायिक लेकर वैठी हुई हैं । कुछ वातें चल रही हैं ।)

पहली—आज पतासी वाई आई कोनी ? काले केता हा की "मू तो काल सूं नी आऊ ।

दूसरी—हा वाई, वात तो साची है, रोज रोज रा झगडा कुण सुणे । आपरा इ मन में रागघेक (द्वेष) तो पैदा वे ।

पहली—तो काई है । लडवा वारा लडे, वारा भू छडे मे थानक मे आणो छोड दा काई ?

(इस तरह पन्द्रह वीस मिनट कुछ चर्चायें चलती रही । गाव मे किसके यहा झगडा हुआ है, किनके जमाई आये हैं, किसने कितना दहेज दिया, कौन कितना अच्छा है, कौन कितना खराव है, सभी तरह की चर्चायें चल रही हैं । इतने मे सादी-सीधी

पोशाक में एक नवयुवती शिक्षित महिला सौभाग्य सूचक चूड़ियो के अतिरिक्त कुछ आभूषण नही, चेहरे पर सौम्यता एव प्रौढता की स्पष्ट झलक, गम्भीर गति से धर्म स्थान मे प्रवेश करती है।)

घापूबाई—आओ, कम्पोडर सा री बहू। थाणे तो धर्म री घणी लाग दीसे। काले तो तबादलो वेइने आया इज हो, आल घर बार ही नी जमायो ने, समाई करवा ई आइग्या ? देखो, राजी बाई धर्म री लाग ईने के काल आया है, म्हारा पड़ोस में किरायारो मकान लीदो है। पड्या-लिख्या है, नवाई परणीज ने आया दिखे। याणे घरम री लाग घणी है, घणा हमजणा है।

कम्पाउण्डर साहब की पत्नी—मांसा मेरे सामायिक का नियम है। घर का काम तो चलता ही रहता है, समय निकालें, तो निकल सकता है।

(छोटा-सा उत्तर देकर कम्पाउन्डर साहब की पत्नी जगह पूंज कर विधिपूर्वक सामायिक लेकर बैठ गई।)

राजी बाई—कठुं आया बाई, कई नाम है थारो ?

कम्पाउण्डर साहब की पत्नी—मासा मैं उदय-

पुर से आई हू । मेरा नाम स्नेहलता है ।

राजी बाई—कीरी बेटी हो, काई जात है थारी ? खास कठे रेवा वाला हो ?

स्नेहलता—(थोडा सोचकर नम्रतापूर्वक)

मासा—अब मैंने सामायिक ले ली है, अब कोई धार्मिक चर्चा करेंगे तो अच्छा रहेगा ।

राजी बाई—बाई, नाम-गाम बतावा मे काई समाई खोटी थोडी हो जावे । नवा नवा आया हो, जणीऊ पूछ लियो । मानेई खबर तो पडनी चाईजे कुण जातीरा हो, किसा गाव रा हो ।

स्नेहलता—मैं एक छोटी सी विनती करती हू । आप थोडा धैर्य रक्खें, मैं अपना पूरा परिचय सामायिक के बाद आपको दू गी । घर धन्धे मे से बडी कठिनाई से समाइक का समय निकाल पाती हू । उसमे ये बातें करने लग जायें तो धर्म-ध्यान कैसे होगा ।

धापूबाई—कम्पोडर सा० री
लेने बैठा, श्रो काई धरम-ध्यान कोनी

स्नेहलता—हा मासा

धर्म है । उससे बढकर हमारे लिए और कौन सा धर्म हो सकता है । किन्तु केवल मुह बाध कर बैठ जाना और तेरी मेरी बातें करने लग जाना सच्ची सामायिक नही है । इसमें तो राग-द्वेष पैदा होता है उल्टे करम बंध जाते हैं ।

घापूबाई—हा बाई, बात तो थाणी साची है, माणे तो अठे बाता इज चाले । काले बाताई बाता मे खूब-लडया वे इगी ?

स्नेहलता—मा साहब हमारी सामायिक तो राग–द्वेष को मिटाने के लिए होनी चाहिए और हम सामायिक मे ही राग–द्वेष पैदा करे, झगडा करें तो फिर हमारा समभाव कहा रहा ? अच्छा मा. साहब अब मैं एक माला फेर लेती हू । आपने तो फेर ली होगी क्योकि आप तो कभी की आई हैं ?

राजीबाई—का की माला बाई, माणे तो रोज ही बाता री मोटी मारा फिरे । सामायिक पूरी बइजा पर माला कदेई पूरी नीवे ।

स्नेहलता—मा साहब सामायिक मे माला का बडा भारी महत्व है । शुद्ध मन से माला फेरने से मन को शाति मिलती है । अच्छा आज आप सब क-एक नवकार मन्त्र की माला फेरें । (सभी माला

फेरने बैठ जाती है, वातावरण शान्त एव सुमधुर हो जाता है। माला पूरी होने पर स्नेहलता 'नारी जीवन' "जवाहर किरणावली" नामक पुस्तक जो स्वाध्याय के लिए वह हमेशा पास मे रखती थी पढ-कर सुनाती है। सभी महिलायें गद्-गद् हो उठती हैं। जैसे कोई प्रवचन सुनती हुई भाव-विभोर हो रही हो। इसके पश्चात् एक दो प्रार्थनाए एव सगीत सुमधुर कठ से तन्मयता के साथ गा जाती हैं। सभी महिलाये इसकी तन्मयता को देखकर झूम उठती हैं। समय होने पर युवती के साथ सभी महिलाए उसकी नकल करती हुई सामायिक पालती हैं और आसन आदि समेट लेती हैं।

स्नेहलता—(उठते हुए) मेरी श्रद्धालु माताओ आप बुरा ना मानो, तो मैं एक अर्ज करू।

सभी—का को बुरो माना बाई, माने तो था की बाता घणी चोखी लागी।

स्नेहलता—मेरा निवेदन है कि जिस धर्म-स्थान मे हम सामायिक धर्मध्यान करते हैं, कम से कम उसे साफ सुथरा रखना चाहिए, ताकि जीव जन्तुओ की उत्पत्ति न हो और वातावरण शुद्ध रहे। हम हिसा आदि के पापो से बच सके। यह हमारे विवेक की बात है। देखो यहा दीवारो पर कितनी धूल जम

रही है । कही-कही मकड़ी के जाले भी पड़ने लग गये है ।

दो-तीन—हां बाई, घणी चोखी वात करी । थोड़ी देर ओजू लागेला मे अवार साफ सफाई कर देवा ।

स्नेहलता—नही-नही । आप क्यो कष्ट करे । आप तो कही निकट से मुझे झाड़ दिलवा दें । मैं सब कर लू गी ।

धापू बाई—कम्पोडर साहब री वहु थाणे तो आल घर जमाणो पड़्यो है, मैं बुड्ढी-ठारी बैठी-बैठी काई करा ।

(एक दो महिलाए अपने घरो से झाड़ू ले आती हैं और युवती के निर्देशानुसार यतना और विवेकपूर्वक बरामदे को साफ कर देती हैं । इसी बीच युवती अपना सारा परिचय भी दे देती है ।)

धापूबाई—मकान किसो चोखो दीखबा लाग्यो राजी बाई ?

राजी बाई—मकान काई दीखबा लाग्यो बाई, समाईक आज वी है ।

रतनीबाई—वे क्यू नी बाई ? किसी चोखी चोखी बाता बताइ आज कम्पोडर सा री बू । घणो आनन्द आयो आज तो । इसो इज नित-नेम रोज वे, तो झगडा रो नाम ईज मिट जा ।

देऊबाई—कम्पोडर सा री बू कालेई आओला नी समाई करवाने ?

स्नेहलता—हा मासा मैंने गुरु महाराज से एक सामायिक प्रतिदिन करने का नियम ले रखा है, अब मेरा सौभाग्य होगा कि मुझ आपकी सगति मिलेगी ।

देऊबाई—मा की सगति बाई ? थाके आवासु, आज सामायिक मे आणद आयो, लडनो झगडनो मट्यो काले मारी बू ने ई लाऊ, वी ने ई असी चोखी शिक्षा दी जो ।

(एक दूसरी से चर्चा करती हुई सभी बहनें अपने अपने घर जाती हैं । सभी के मन मे एक अपूर्व आनन्द है जो पहले कभी नही मिला । सभी ने अपने अपने घर जाकर चर्चा की । चारो तरफ (स्नेहलता) युवती ! नाम की धूम मच गयी । प्रतिदिन सख्या बढने लगी धीरे-धीरे युवतिया और बच्चिया भी आने लगी । स्नेहलता बाई ने सामायिक का व्यवस्थित

कार्यक्रम वना लिया, सभी को धार्मिक शिक्षण देना प्रारम्भ कर दिया, कुछ ही दिनो मे एक सहयोगिनी युवती को और तैयार कर लिया जो वच्चे-वच्चियो की क्लास को सम्हालने लगी। इस प्रकार सारे गाव का वातावरण धर्ममय वन गया केवल एक युवती के कारण।)

(आज प्रत्येक क्षेत्र मे गाव-शहर मे ऐसी युवतियो की आवश्यकता है। पढी लिखी युवतिया धर्म से दूर न रहकर अपने कर्त्तव्य क्षेत्र मे कूद पडे, तो निश्चित जैन महिलाओ मे वहुत शीघ्र क्रांति आ सकती है, और चन्द युवतियो से धार्मिक आराधना मे चली आ रही जडता दूर हो सकती है, वृद्धाओ की पचायती सामायिक उचित साचे मे ढल सकती है।)



# युवक धर्म से दूर क्यों ?

शैशव तारुण्य एवं वृद्धत्व तीनो अवस्थाओ मे युवा अवस्था अर्जन—सर्जन एव नूतन निर्माण प्रधान होती है। बाल्यकाल यद्यपि सस्कार—निर्माण का काल होता है, किन्तु अधिकाशतया वह खेलकूद, विनोद, हास्य, कौतुक, आदि मे ही पूरा हो जाता है। वार्धक्य में इन्द्रिय शैथिल्य, बौद्धिक विस्मृति शारीरिक अक्षमता, पारिवारिक चिन्ता और अनुत्साह के कारण चिडचिडापन आदि अनेकानेक मानसिक रोगो के शिकार होने से मृत्यु निकट ही परिलक्षित होती है। किन्तु युवा अवस्था ऐसी अवस्था है, जो नूतन उपलब्धियो का केन्द्र है। तरुणाई मे चिन्तन शक्ति, कार्यक्षमता, विवेक जागृति, शारीरिक क्षमता, कर्त्तव्य-तत्परता एव जीवन निष्ठा आदि अनेक योग्यताओ की सगृहीति होती है। इसका सदुपयोग अथवा दुरुपयोग दोनो विवेक पर आधारित है।

युवको से आज एक वर्ग या प्रान्त ही नही सम्पूर्ण राष्ट्र आशान्वित है। तूफानी योजना, आकाशी कल्पना और नवीन सर्जना के लिए युवक कीर्ति स्तम्भ हैं। इस अवस्था मे नया खून नया चिन्तन

और नया जोश रहता है । बस आवश्यकता है थोड़े होश की ।

भारतीय लाडले इन युवको के विषय मे वार-बार एक प्रश्न मुखरित होता है कि आज का युवा वर्ग धर्म से भटक गया है, धर्म से कोसो दूर चला जा रहा है । युवको मे धर्म के प्रति आस्था नही है, और वे उच्छृखल बनते जा रहे हैं ।

चिन्तन करने पर लगता है बात कुछ हद तक ठीक भी है, किन्तु सर्वथा नही । देखना यह है कि इसके कारण क्या है । सिद्धान्तत विना कारण के कोई कार्य नही होता । युवको के धर्म से विमुख होने मे भी कुछ कारण अवश्य होने चाहिये ।

मेरी अपनी मान्यता है कि युवक धर्म के बहुत निकट है । अगर वह दूर है, तो तथा कथित धर्म के नाम से चलने वाली छलना से । धर्म को हम सही अर्थों मे परिभाषित करे, तो ज्ञात होगा कि धर्म व्यक्तिगत जीवन व समाज दोनो से घनिष्ठ सम्बन्ध रखता है । आज की भाषा मे जिसे हम नैतिकता अथवा सामाजिकता कहते है, उसे भी आपेक्षिक दृष्टि से धर्म की सज्ञा दी जा सकती है । यदि यो कहे कि वास्तविक सामाजिक जीवन धार्मिक जीवन का प्रथम सोपान है, तो कोई अतिशयोक्ति नही होगी । उक्त

परिभाषा के अनुसार आज के नवयुवको के जीवन पर चिन्तन किया जाय, तो उनमे कुछ धार्मिकता मानी जा सकती है। क्योकि वे विद्यार्थी जीवन मे रहते हुए यत्किंचित् सामाजिक नियमो का अथवा अपने विद्यालय, महाविद्यालय के सामान्य नियमो का पालन करते ही हैं। लेकिन इतने मात्र से हम उन्हे अध्यात्म मार्ग के पथिक या वास्तविक धार्मिक जीवन के परिपालक की सज्ञा नही दे सकते। क्योकि उक्त परिभाषा केवल सामाजिक जीवन के साथ ही सम्बन्धित है। वास्तविक धार्मिक जीवन का सम्बन्ध व्यक्ति, समाज, राष्ट्र व ससार के सामान्य नियमो से ऊपर उठकर समस्त चराचर प्राणियो के साथ मैत्री अथवा समता का सन्देश देता है तथा इस प्रकार के धार्मिक सिद्धान्त व्यक्ति को एक ऐसे उच्च आदर्श की ओर प्रेरित करते हैं, जहा व्यक्ति अपनी समस्त समस्याओ का हल सहज प्राप्त कर लेता है। उस परम आध्यात्मिक धर्म के प्रति अवश्य युवक अनास्थावान बना हुआ है, किन्तु चिन्तन यह कहता है कि इसका कारण युवक स्वय ही नही है। अन्य भी अनेक कारण हैं। उनको यदि हम सक्षेप मे वर्गीकृत करें तो वे निम्न तीन भागो मे विभाजित होगे।

सबसे प्रथम कारण तो युवक के माता-पिता, अभिभावक अथवा सरक्षकगण हैं, जो कि स्वय केवल श्रद्धा के बल पर चलते हैं। उन्हे धर्म विषयक ज्ञान

प्रायः नही-सा होता है । जब कभी युवक पूछ बैठते हैं कि पुण्य-पाप क्या है, स्वर्ग-नर्क अथवा आत्मा एवं कर्म क्या है, तब माता-पिता, संरक्षकगण आदि इस प्रकार के ज्ञान से शून्य होने के कारण उनका यथोचित समाधान नही कर पाते हैं और न समाधान के प्रयास करते हैं । आज का युग तर्कप्रधान है, अतः युवक माता-पिता आदि के समक्ष प्रश्न-प्रतिप्रश्न रूप से तर्क उपस्थित करता है । जब वे उन्हे समाधानों से तुष्टि नही दे सकते, तो कह देते है—तू तो नास्तिक है, धर्म पर श्रद्धा नही रखता आदि·······आदि । फल स्वरूप युवक नास्तिक नही होगा, तो भी नास्तिक बन जावेगा । इस प्रकार विचार करने से ज्ञात होता है कि नवयुवकों की अश्रद्धा का एक कारण उनके अभिभावको मे ज्ञान-शक्ति का अभाव भी है । यदि संरक्षक धार्मिक नियमोपयोगी नियम के तथा उनकी आधुनिकता के यत्किंचित् भी ज्ञाता हो, तो वे नवयुवको को समझा सकते हैं और उनके तर्कों का यथोचित समाधान देकर उन्हे वास्तविक धार्मिक पथ प्रदर्शित कर सकते हैं ।

दूसरा कारण है धार्मिक जीवन के जीते-जागते नमूने सन्त । ऐसे महर्षि भी आज वैसे बहुत अल्प सख्या मे पाये जाते हैं, जिनकी कथनी एव करनी मे एकरूपता हो । बहुधा यह देखा जाता है कि धर्म-गुरू

कहलाने वाले व्यक्ति भी अपने सामान्य नियमो का ठीक तरह पालन नही करते एव इस प्रकार की घृणित एव कुत्सित वृत्तियो मे पहुच जाते है, जिनका प्रकटीकरण जब नवयुवको के समक्ष होता है, तो वे अपने आप उन तथाकथित गुरुओ के प्रति श्रद्धा-विहीन हो जाते है । इसी प्रकार एक यह भी मुख्य कारण है कि जब कभी नवयुवक धर्म गुरुओ के समक्ष अपने प्रश्नो को लेकर उपस्थित होते है, तो वे भी प्राय उस प्रकार के ज्ञान से शुन्य होने के कारण उनका समाधान नही कर पाते बल्कि उत्तेजित होकर नास्तिक आदि अनेक उपाधिया दे देते हैं । फल-स्वरूप नवयुवक धर्म-पथ से कोसो दूर भागते चले जाते हैं ।

तीसरा मुख्य कारण वर्तमान कालीन वायु-मण्डल है । तात्पर्य यह है कि आज का वायुमण्डल ही कुछ ऐसा बन चुका है कि व्यक्ति जहा-जहा भी समूह के रूप मे एकत्रित होते हैं—सभा-सोसाइटियो मे, क्लबो मे, सिनेमाघरो मे उन्हे प्राय. भौतिक जीवन के ही सस्कार मिलते हैं । अध्यात्म अथवा धर्म की बातें वे प्राय श्रवण ही नही कर पाते । फल-स्वरूप उनका चितन भी प्रतिक्षण उन्ही विषयो की ओर होता है । उनके सामने धार्मिक जीवन की बातें रखी जाती हैं, तो उनका प्रभाव नगण्य सा रहता है । कारण स्पष्ट है कि नीचे से अग्नि तप रही है, ईंधन

पर ईंधन दिया जा रहा है और यह आशा कैसे की जाय कि सिगडी पर पडा हुआ तवा दो-चार पानी की बूंदो से शीतल हो जायेगा। जो नवयुवक चौबीसो घण्टे प्राय.भौतिकता की चकाचौंध मे उलझा रहता है, सिनेमाघरो आदि के सस्कार लेता रहता है, उसके जीवन मे घटे आधे घटे की धार्मिक चर्चा कितना परिवर्तन कर सकती है ? यह विचारणीय है ।

इस प्रकार चितन की गहराई मे पहुचने पर ज्ञात होता है कि आज के युवको मे धार्मिक अश्रद्धा का कारण केवल वे स्वय ही नही, अपितु उनके माता-पिता, तथाकथित धर्म-गुरू एव आज का वायुमण्डल भी है । अत. यदि हमे उन्हे कुछ मोड देना है, तो धार्मिक सिद्धान्तो को उनके समक्ष आधुनिक तरीके से रखना होगा, उनके प्रश्नो का वैज्ञानिक तरीके से समाधान करना होगा तथा स्वय धर्म-गुरुओ को अपनी कथनी एव करणी को एकरूपता देना होगा । आज के कुत्सित वायुमण्डल मे आमूल-चूल परिवर्तन किया जाय । ऐसा करने से स्वभावतः उनकी रुचि धर्म की ओर बढ़ेगी और वे सही मार्ग प्राप्त कर सकेंगे । वैसे गहरी दृष्टि से चिन्तन किया जाय, तो आज का युवक सही दिशा के अभाव मे भटक रहा है । यदि उसे सही दिशा मिले, तर्क-सगत मार्ग मिले एव समस्याओ का समाधान मिले तो कोई कारण नही कि गलत मार्ग का अनुकरण करे । □

# धर्म-वर्तमान युग में घातक अथवा वरदान

किसी भी क्रिया की घातकता अथवा सार्थकता उसकी मौलिक परिभाषा पर ही निर्धारित की जा सकती है, अत धर्म के द्वारा घातकता अथवा वरदा-नता को समझने से पूर्व हमे धर्म की मौलिक परि-भाषा निश्चित करनी होगी। आजकल धर्म के परि-वेश मे जो कुछ चल रहा है, वह वास्तव मे धर्म नही, एक दम्भ अथवा छलना मात्र है। धर्म का वास्त-विक रूप आज हमारे समक्ष सही अर्थो मे प्राय. प्रस्तुत ही नही किया जा रहा है और जो रूप आज हमारे समक्ष यत्र-तत्र दिखाई देता है वह अधिकाशत विकृत ह। अत उनका घातक होना स्वाभाविक है। भारतीय सस्कृति के क्रातिकारी दार्शनिक अथवा उद्-गाता प्रभु महावीर ने धर्म की जो परिभाषा दी है, यदि उसे अच्छी तरह से समझा जाय और उसके अनुसार धर्म को व्याख्यायित किया जाय, तो निश्चित रूप से आज के युग मे ही नही वरन् प्रत्येक युग मे वह वरदान सिद्ध होगा। धर्म युग के साथ कभी बदलता नही है।

महावीर ने कहा है·—

····वत्थु सहाओ धम्मो····

अर्थात् वस्तु का स्वभाव धर्म है। अत· जैसे पानी का धर्म शैत्य (शीतलता) और अग्नि का स्वभाव उष्णता, ये अपरिवर्त्य है, उसी प्रकार धर्म, आध्यात्मिक दृष्टि से जो आत्मा का स्वभाव है, अपरिवर्त्य ही रहेगा। वह प्रत्येक युग मे, प्रत्येक समय मे वरदान ही सिद्ध होगा, घातक नही।

आज जितने भी सघर्ष दृष्टिगत होते हैं। वे धर्म के कारण नही तथाकथित धर्मों के कारण हैं। तथाकथित धर्मों से मेरा अर्थ धर्म के नाम पर हो रही प्रवचना से है। आज धर्मों का आतरिक तत्व स्पष्ट नही होने के कारण हम सभी उसके ऊपरी कलेवर को पकडे चल रहे हैं। यदि हम धर्म के मौलिक स्वरूप को समझ ले, तो धर्म का घातक होना तो दूर रहा, सारे सघर्षों की जड ही समाप्त हो सकती है।

धर्म सघर्ष नही, प्रेम, स्नेह, वात्सल्य और विचारो की विराटता सिखाता है। जब तक धर्म को हम ऊपरी तौर पर शाब्दिक परिवेश मे ही देखेंगे तो निश्चित रूप से धर्म घातक सिद्ध होगा। इस सम्ब-

है । मैं अभी जाता हू, आन्दोलन करता हू, यहा के राजा के विरोध मे कि ऐसा राज्य बेकार है जहा कुए पर पाल नही बनाई जाती । अन्दर से व्यक्ति ने आवाज लगाई—भाई आन्दोलन तो बाद मे करते रहना, मै मर रहा हू, मुझे तो बचालो । शिष्य कहने लगा सवाल तुम्हारे अकेले का नही है, सवाल व्यवस्था का हैं । तुम अकेले जिओ या मरो इससे कोई अन्तर नही पड़ने वाला । यह कहकर वह भी चला गया । कुछ देर पश्चात् एक ईसाई वहा पहुचा । "बचाओ, बचाओ" की आवाज सुनकर धडाम से कुए मे कूद गया । अपनी शक्ति से उसे बाहर निकाला । निकलने पर कृतज्ञ होकर कुए मे गिरने वाले व्यक्ति ने कहा—भाई तुम बड धर्मात्मा और दयामय हो, जो तुमने मुझे बचा लिया । वह ईसाई पादरी कहने लगा "भाई धर्म कर्म मैं नही जानता ईशु ने कहा है गिरते हुए को बचाने से मुक्ति मिलती है, इसलिए मैं तुमसे प्रार्थना करूगा कि—रोज ही तुम कुए मे गिरो और रोज ही मुझे मुक्ति मे जाने का मौका मिले ।

घटना यही पर पूरी हो जाती है । लेकिन यह एक गहरा सकेत दे रही है कि आज धर्म के समझदार और ठेकेदार ऐसे ही कुछ बन गए हैं, जिससे कि धर्म घातक प्रतीत होने लगा है । वह प्राय शब्दो दार्शनिक विचारो मे और व्याख्याओ मे ही सीमित

आ जावे अर्थात् जहर मिल जाए तो एतावता पानी का स्वभाव दूषित नही माना जा सकता । उस विकृति को ही दूर करना होगा । इसी प्रकार धर्म मे आई विकृति को दूर करने का प्रयास करना चाहिए, ताकि हम धर्म की वरदानता और उपादेयता को समझ सकें ।

# भटकती पीढ़ी और दिशा बोध

## शुद्धि पत्र

| पृष्ठ संख्या | पंक्ति | अशुद्ध | शुद्ध |
|---|---|---|---|
| (लेख) ७ | २० | नहीं हो पाती | नहीं हो पाती, |
| ७ | २२ | रहते हुए | रखते हुए |
| ८ | ३ | चाहूगा | चाहूंगा |
| ८ | ८ | की नीव और | की नींव है और |
| ८ | १६ | अजम्ब्र | अजस्र |
| ९ | १२ | यह | ये |
| ६ | १८ | उस समह | उस समय |
| ६ | १६ | उत्तरदाता थे | उत्तरदाता थे |
| ८ | ११ | देश, संयम | देश—संयम |
| ९ | ८ | हो गया है तुम | हो गया है। तुम |
| ९ | १४-१५ | देखो क्या होता है | देखो, क्या होता है। |
| ९ | १७ | प्रदीप को | प्रदीप की |
| १० | १३ | संतूपत हैं। | संतृप्त हैं। |

| पृष्ठ संख्या | पंक्ति | अशुद्ध | शुद्ध |
|---|---|---|---|
| १० | १८ | सर्वंतो भावेन | सर्वतो भावेन |
| ११ | ३ | माघ लिया है | माव लिया है |
| १२ | ४ | मित्र आज मेरे | मित्र, आज मेरे |
| १२ | १३ | महापुसुषो | महापुरुषो |
| १३ | १ | मस्थान समय | मम्थान । समय |
| १६ | १० | शारो | थारो |
| १६ | १२ | कुतर्का | कुतर्का |
| २१ | ४ | कहा करते है | कहा करते हो |
| २१ | १६ | प्रम्नोत्तरो" | प्रश्नोत्तरो |
| २१ | २० | जाता हू | जाता हू |
| २२ | १० | विपय | विषय |
| २४ | १५ | पूछे मैं जरा | पूछें । मैं जरा |
| २५ | अन्तिम | होता है अष्टम | होता है । अष्टम |
| २७ | १ | हां गुरुदेव मेरा नाम | हां गुरुदेव, मेरा नाम |
| ३२ | २० | इलाम | इलाज |
| ३३ | १६ | श्रम जीवी हो सकते हैं, | श्रम जीवी नही हो सकते है, |
| ३३ | २२ | चाहिये सिद्धान्तत | चाहिये । सिद्धान्तत |
| ३५ | १६ | बैठते है वे ही | बैठते हैं, वे ही |
| ३५ | २१ | दौडे आयेगे क्यो कमल | दौडे आयेगे । क्यो कमल |

| पृष्ठ संख्या | पंक्ति | अशुद्ध | शुद्ध |
|---|---|---|---|
| ३६ | ७ | मनिजी | मुनिजी |
| ३६ | ११ | स्पप्न | स्वप्न |
| ३८ | ११ | वाटल | वाटल |
| ३८ | १८ | वीयग | वीयर |
| ४१ | १४ | नष्ठ | नष्ट |
| ४३ | १ | कौन देना है। | कौन देता है ? |
| ४३ | १ | परम्परा | परम्पर |
| ४४ | १६ | द दवार | हृ दन्ह् द वार |
| ४६ | ४ | नही देखा पर | नही देखा, पर |
| ४७ | १४ | मझ मालम है। | मुझे मालूम है। |
| ४७ | अन्तिम | हय | हम |
| ४८ | " | मरोगे घोडो | मरोगे, घोडो |
| ५१ | १३ | आ गये, | आ गये। |
| ५१ | २१ | नही है मैंने तो | नही है, मैंने तो |
| ५२ | ४ | देंग आज | देंगे, आज |
| ५४ | अन्तिम | मजेने इस शकल मे | मजे ने। इस शकल मे |
| ५५ | ३ | जायेगे इन हालत मे | जायेंगे। इन हालत मे |
| ५५ | ११ | कहा गया यह सब | कहा गया यह सब |
| ६३ | अन्तिम | आ दान कोनी देउदाई | आ दान कोनी, देउदाई |

| पृष्ठ सख्या | पक्ति | अशुद्ध | शुद्ध |
| --- | --- | --- | --- |
| ६४ | अन्तिम | पक्ति के नीचे एक पक्ति और जोडनी है, वह इस प्रकार है— | |
| | | वीने माथे चढाई राखी… … | |
| ६५ | ११ | जठा केड | जठा केडे |
| ६५ | १६ | वा बाई थू साँची | वा बाई, थू स |
| ६५ | १७ | देख लेऊ और | देख लेऊ । और |
| ६५ | १८ | देख लीजे । थाने | देख लीजे थाने |
| ६६ | अन्तिम | डर लगे | डर लागे |
| ६८ | ९ | ईनेके काल | ईनेके । काल |
| ७२ | ७ | झाड दिलवा दे । | झाडू दिलवा दे । |
| ७३ | ७ | हा मासा मैने | हा मासा, मैने |
| ७३ | ११ | मा की सगति बाई ? | माकी काई सगति बाई ? |
| ७३ | १३ | मट्यो काले | मट्यो, काले |
| ७३ | १९ | युवती । नाम की | युवती के नाम |
| ७३ | २० | बढने लगी धीरे धीरे | बढ़ने लगी, धीरे धीरे |
| ८० | १६ | देना होगा । | देनी होगी । |

